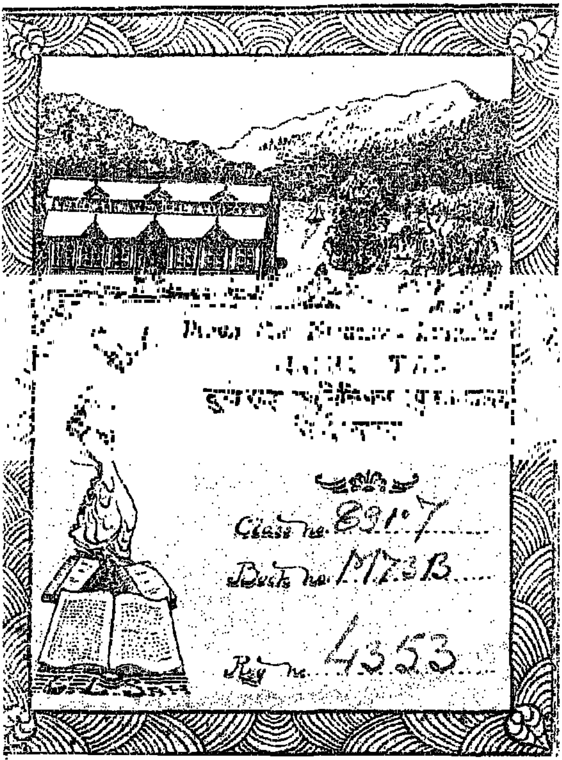




[व्यक्तिव्यंजक निबंध]

मोहनलाल गुप्त

प्रकाशक

चौधरी एण्ड सन्स

बनारस-१

चित्रांकन : मनोरंजन कांजीलाल

प्रथम संस्करण : नवम्बर १९५६

मूल्य : दो रुपया चार आना

मुद्रक

राष्ट्रभाषा मुद्रणालय

लहरतारा

बनारस—४

इसे हँसीमें न उड़ाइये !

हास्यको कुछ गहिर-गंभीर लोग हलका-फुलका समझ हँसीमें उड़ा देते हैं। हास्य हलका नहीं—भारी चीज़ है; गंभीर विषय है। हिन्दीमें हास्यके नाम पर एक बड़ा-सा रिक्त बना हुआ है इसपर गंभीरता पूर्वक सोचनेकी जरूरत है। आवश्यकता है कि इस्पाती आलोचक हिन्दीके लौह लेखनीधरोंको मुस्कानकी कला सिखायें। मनहूसोंको यह कहनेका मौका न दें कि हिन्दी वाले हँसना नहीं जानते।

प्रस्तुत पुस्तकका लेखक हिन्दीके हास्यरसका सरोवर लबालब भरा देखना चाहता है। लेखकने भी इसी ओर एक हलका-सा प्रयास किया है। पाठक डुबकी लगायें। हास्यके दो क्षण, मुस्कानके दो कण आपको मिल जायँ तो लेखक अपना श्रम सार्थक समझेगा।

बस !

विजय दशमी
सन् १९५६

—मोहनलाल गुप्त

बनारसी रईस

भाई भगवतीशरण सिंह

को

अनुक्रम



काशीकी दर्शनीय वस्तुओंमें लोग विश्वविद्यालय, विश्वनाथ मंदिर, दशाश्वमेध घाट और सारनाथका नाम गिनाकर ही सन्तुष्ट हो जाते हैं पर काशीमें आकर यदि आपने किसी रईससे मुलाकात न की तो कुछ न देखा। काशीके महत्वपूर्ण व्यक्तित्वकी उपेक्षासे दुखी होकर ही मेरी लेखनी आज सजग हुई है।

रईसको समझनेमें कोषकी परिभाषा सहायक नहीं होती। रईसकी वास्तविक रूपरेखा जाननेके लिए आपको इस नयी परिभाषासे काम लेना होगा। रईस उस

निठल्लूको कहते हैं जिसके पास बेकार वक्त और फालतू रुपया हो और जिसका अल्प-जीवन इसी समस्याको सुलझानेमें समाप्त हो जाता है कि समय और विशाल धन-राशिका सदुपयोग कैसे हो।

रईसकी दिनचर्या बड़ी विचित्र होती है। सूरज निकलनेके दो घण्टे बाद प्रातःकाल प्रारम्भ होता है। उठते ही नौकरोंकी पुकार होती है, घरभरमें हलचल मच जाती है।

'सबेरा होय गवा ?'

'हाँ सरकार'—कहकर नौकर सामने बढ़िया-सी फरसी लाकर रख देता है। रईस तकियोंका सहारा लेकर बैठ जाते हैं। लखनौआ खमीरा तम्बाकूकी खुशबू और अग्निहोत्रियोंके वेद पाठकी तरह गुड़-गुड़की ध्वनिसे समूचा कमरा भर जाता है।

दो घण्टेसे कम बिस्तरसे उठनेमें नहीं लगते। दैनिक कृत्यसे छुट्टी पाते ही नाई सामने आ खड़ा होता है और एक घण्टे तक मालिशका मल्लयुद्ध चलता है। यह भी बड़ा मनोरञ्जक दृश्य होता है—लगता है जैसे गामा और जिबिस्कोकी जोड़ छूटी हो। आगरेका ताजमहल आप चाहे देखें या न देखें पर जीवनमें एक बार किसी बनारसी रईसकी मालिशका दृश्य अवश्य देख लें। मालिशके घण्टे भर बाद स्नान होता है जो कि नखरोंमें मुगल-हरमकी बेगमोंको भी मात करता है। स्नानके बाद भोजन। रईस खाते नहीं केवल सूँघते हैं। अधिक-से-अधिक चख भर लेते हैं।

भोजनके बाद आराम चाहिये—कम-से-कम चार घण्टे का। रईसका यह समय प्रायः अन्तःपुरमें व्यतीत होता है। सन्ध्याके एक घण्टे पहले निकलते हैं तो 'बहरी अलंग'का प्रबन्ध होता है। शहरके बाहर रईसका एक अपना बगीचा होता है, जहाँ वह अपनी सन्ध्या व्यतीत करता है। साथमें कुछ यार-दोस्त रहते हैं, भाँग छनती है, गप्प लड़ती है, गालीगलौज होती है। ताजी हवा शरीरमें लगते ही

शरीरमें सुरसुरी चढ़ती है, नशा तेज होता है और फिर एक ही सवारीपर लादकर रईस और उनकी कम्पनी घर पहुँचायी जाती है।

कुछ रईस रातको घर ही पर दरबार लगाते हैं जिसमें पड़ोसके नवरत्न इकट्ठे होते हैं। फिर बातें शुरू होती हैं। साहित्य, कला, राज-नीति और अखबारकी ताजी खबरोंपर आलोचना होती है। दरबारमें कोई ऐसा विषय नहीं होता जिसके विशेषज्ञ मौजूद न हों या जिसपर बातचीत न होती हो। रईस भी हाँ-में-हाँ मिलाये जाते हैं, बीच-बीचमें 'अच्छा' 'वाह' 'भईखूब'की टेक भी लगाते चलते हैं। दरबारियोंकी खातिर पान तम्बाकूसे की जाती है।

रईसका नाम तो बहुत बड़ा होता है पर एक छोटा-सा घरेलू नाम भी होता है जिसे छोटे-बड़े सभी प्यारसे पुकारते हैं। जैसे सरकार—छोटे सरकार, बड़े सरकार; भैया—छोटे भैया, बड़े भैया, तथा बबुआजी, बच्चाजी, राजाजी, कुँअरजी आदि।

रईसके नामके आगे कभी-कभी सींग भी होती है जैसे रायसाहब, रायबहादुर, सर, राजा....। रईसको एक दुम भी होती है जिसे वह हरदम हिलाया करता है, विशेषकर सरकारी अफसरोंसे मिलनेपर। सायत पूछकर कलक्टर और कमिश्नरसे महीनेमें दो बार जरूर मिल लेता है। फसलकी चीजें जैसे लँगड़ा आम, कटहल, और विशेष अवसरपर रामभण्डारकी मिठाइयाँ, ह्विस्कीकी बोतलें भी टोकरीमें रखकर (नौकरके सरपर) बँगलेपर पहुँचाता है। रईसकी एक विशेषता है कि वह सरकारी अफसरोंको छोड़कर और किसी दूसरेके घर नहीं जाता। एक रईस दूसरे रईसके घर शादी या मरनीपर ही जाता है।

रईसको जानवरोंका शौक भी होता है। बनारसके रईस घोड़ोंसे बहुत प्रेम रखते हैं। नये रईस चाहे 'फोर्ड'के फन्देमें पड़ जायँ पर पुराने रईस घोड़ोंका साथ छोड़ना नहीं चाहते। सवारीके लिए हर रईसके पास एक घोड़ा जरूर होगा चाहे वह हाड़ पिञ्जर-अवशेष ही क्यों न हो। रईसी

कायम रखनेके लिए घोड़ेका अस्तबलमें पड़े रहना भी जरूरी समझा जाता है।

एक रईसका घोड़ा-प्रेम इतना बढ़ा हुआ है कि वह अपने घोड़ेको पुत्रसे भी अधिक स्नेह करते हैं। उनका घोड़ा रोज पाँच सेर दूध पीता है। पावभर घी, पावभर मक्खन खाता है, सुबह-शाम पिश्ते-बादाम और मेवेका नाश्ता करता है। फसलमें पाँच-पाँच सेर अँगूर और बेदाना उसे खानेको मिलता है। गर्मीमें रईस उसे खुद अपने हाथसे चाँदीके वर्क लगे मुरब्बे खिलाते हैं। थककर आता है तो घोड़ेकी तीन बार मालिश होती है, गरम पानीसे स्नान करता है और कम्बल ओढ़कर सोता है। एक रईसका घोड़ा जितना आराम पाता है वह बड़े-बड़े अफसरोंको भी मुअस्सर न होता होगा।

किसी रईसको आपने आजतक गधा पालते न सुना होगा। शौक ही तो है। एक रईसको गधा पालनेकी खब्त सवार हुई। किसीने आपसे कह दिया कि काबुलमें गधे नहीं होते। आप अड़ गये। 'वाह होते क्यों नहीं? मैं काबुलका गधा मँगाऊँगा। चाहे जितना भी रुपया खर्च हो। नौकर घबड़ाये कि काबुल कौन जाये। एक दरबारीका दिमाग चमका, तो गया कलकत्ताकी एक सरकस कम्पनीसे एक जबरा ले आया और रईससे २५ हजार रुपये वसूल किये।

रईस 'काबुली गधे' को देखकर खुश हो गये। एक सप्ताह रखकर उसे निकाल दिया। कहने लगे कि रईसोंको गधे पालना शोभा नहीं देता।

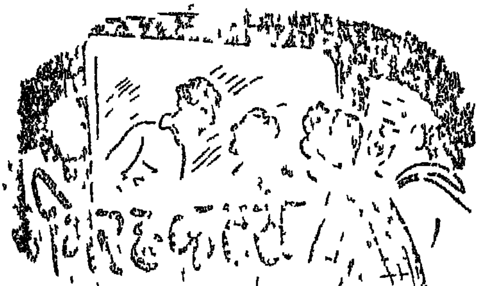
रईस अपने नाम, प्रतिष्ठा और परिवारकी परम्पराके पीछे जान देते हैं। एक रईस कलकत्ता जा रहे थे। स्टेशनके पुलपर पहुँचते ही गाड़ीने सीटी दे दी। गाड़ी पकड़नेको रईस लपके पर आपके खिदमतगारने आगे बढ़कर रोक दिया—'सरकार गाड़ी छूट रहे चाहे जाय पर

आप कुलकी चाल न छोड़ीं।' रईस जबतक बतासेकी चालसे प्लैटफार्म पर पहुँचे तबतक गाड़ी खिसक दी।

रईसके नौकर और खिदमतगार प्रायः पथप्रदर्शक और शिक्षकका काम करते हैं। रईसके व्यक्तित्वपर खिदमतगारोंका काफी प्रभाव होता है। वेतन तो उनका नाममात्रको केवल ५ रु० रहता है। पर ईनाम बख्शीश लेते लेते १०५ तक पहुँच जाता है वास्तवमें अक्लके मैदानमें खिदमतगार रईसोंको काफी अच्छी तरह चराते हैं।

एक रईसने मरते समय अपने खिदमतगारसे कहा—'भई कोई ऐसी तरकीब बता सकते हो कि अगले जन्ममें हम फिर रईस बनें।' नौकरने कहा—'सरकार ज्योतिषीसे पूछ कर बतावेंगे।' दूसरे दिन खिदमतगारने अर्ज किया—'सरकार हो तो सकता है पर एक काम करना होगा। एक हजार अशर्फी रेशमके दुपट्टेमें बाँधकर बीच गङ्गकी धारामें डुबोना होगा। अगले जन्ममें आपको उसका सूदद्र सूद मिलेगा और आप रईस भी बन जायँगे।' रईसने खुश होकर खिदमतगारको एक हजार अशर्फियाँ चुपकेसे दिलवा दीं।

मरनेपर रईस अगले जन्ममें क्या बने यह तो मालूम नहीं पर खिदमतगार उसी जन्ममें रईस बन गया।



मुलाकात

उस रोज सिनेमामे एक सज्जनसे भेट हो गयी। 'क़िस्मत' देखने गया था। इण्टर्वल हो चुका था। स्पेशल क्लासकी एक कुर्सीपर बिजलीके पङ्खेके नीचे बैठा पसीना सुखा रहा था। बगलमें कुछ दूरपर बैठे हुए सज्जन मेरे पास खिसक आये—

'आज तो बड़ी गर्मी है।'

'जी!'—मैंने ध्यानसे देखा, चुन्नटदार धोती, कुरता टोपीमे कोई पुराने रईस मालूम पड़ते थे। रोबदार लम्बी मूँछे चेहरेपर आतङ्क जमाये हुई थी।

कुरतेके सोनेके बटन और वेस्टकोटकी जेबके बीच घड़ीकी सोनेकी चैन लटक रही थी।

'कहिये खेल कैसा है' ?

'अच्छा ही तो—पर मेरी रायमें इसका नाम एक 'जेबकटकी जिन्दगी' होता तो ज्यादा अच्छा होता। इसमें जेब काटनेकी अच्छी शिक्षा मिलती है।'

'जेबकटके प्रति जो आप इतने ईर्ष्यालु और अनुदार दिखाई पड़ते हैं, यह आपका दोष नहीं—अच्छा यह बताइये आप क्या करते हैं।'

'मैं अखबारनवीस हूँ।'

'आप भी तो किसीकी जेब काटते हैं। अखबार के दफ्तरमें आप अपनी कलाका प्रदर्शन करते हैं और महीनेके अन्तमें अखबारके मालिककी जेबसे एक निश्चित रकम निकाल लेते हैं। यह क्या है? आपमें और एक जेबकटमें क्या अन्तर है—इसपर आपने कभी विचार किया है?'

'जी नहीं'—बगलवाले सज्जनकी विचित्र बातोंसे मैं कुछ चकित तो था ही, मेरा मनोरञ्जन भी हो रहा था।

'गिरहकट भी आपकी ही तरह एक कलाकार है।'

'सच?'

'जी हाँ सच! जेब काटना आसान नहीं। यह एक कला है और दुरूह कला।'

'जी'। मैंने जेबसे रुमाल निकालकर मुँहका पसीना पोंछा।

इतनेमें खेल आरम्भ हो गया। बातचीत रुक गयी। अँधेरेमें भय हुआ कि कोई मेरी जेब न साफ कर दे पर जेबमें एक चवन्नी, रुमाल और कुछ अस्वीकृत कविताओंके अतिरिक्त कुछ न था—इसलिए निश्चिन्त था।

खेल खतम होनेपर बगलगीर सज्जन मेरी ओर फिर आकृष्ट हुए—

'आप बनारसमें ही रहते हैं ?'

'जी हाँ, और आप' ?

'मैं तो बम्बईमें रहता हूँ—वहाँ एक लोकोपकारी संस्था चलाता हूँ।'

'संस्थाका नाम क्या है।'

'वह बादमें बताऊँगा, पहले प्यास लगी है। आइये किसी रेस्टराँमें चलें।'

हम दोनों पासके ही एक रेस्टराँमें बैठ गये। बातचीत फिर शुरू हो गयी।

'गिरहकटोंका आपको कुछ अनुभव नहीं। मैं बम्बईमें रहता हूँ—मैं जानता हूँ।'—मैं चुपचाप सुनता रहा। मूछोंपर हाथ फेरनेके बाद वह फिर बोले—

'गिरहकटको आप साधारण व्यक्ति समझते हैं ? गिरहकट बहुत बड़ा कलाकार है। मनोविज्ञानका वह बहुत बड़ा पण्डित होता है। आपको मनोविज्ञानका अध्ययन करना हो तो किसी गिरहकटको गुरू बनाइये।'

'मैंने भी मनोविज्ञानमें एम० ए० किया है पर देखता हूँ मेरा भी मनोविज्ञानका ज्ञान अधूरा ही है।'

'व्यावहारिक मनोविज्ञानका एक पाठ मैं आपको पढ़ा सकता हूँ। यह सामनेकी मेजपर जो आदमी बैठा है—उसे मैं नहीं जानता पर मैं विश्वासपूर्वक कह सकता हूँ उसके जेबमें काफी अच्छी रकम है।'

'यह कैसे मालूम ?'

'मेरी आँखोंको भी आदमीकी पहचान करनेका मर्ज है। आपने ध्यान नहीं दिया, यह आदमी अपने साथ ही सिनेमासे निकलकर रेस्टराँमें आया है। राहमें वह बार-बार अपनी जेब सँभालता हुआ

चलता था। भीड़से वह बचकर निकलता था। बीचहीमें कभी कभी अचानक वह चौंक भी उठता था और उसका हाथ जेबपर चला जाता था। मानव-मस्तिष्ककी प्रक्रियाका ज्ञान यदि आपको होगा तो जानते होंगे कि मस्तिष्कमें एकाग्रताका अभाव होता है। आप अपनी जेबका बराबर ध्यान नहीं रख सकते। कुछ क्षणोंके लिए आपका ध्यान दूसरी ओर बँट जाता है, आप कोई और बात सोचने लग जाते हैं। इन्हीं कुछ क्षणोंका गिरहकट बड़े मजेमें उपयोग कर लेता है।'

आश्चर्य चकित-सा मैं आइसक्रीम सोडाका सिप लेते हुए अपने नये मित्रकी बातें सुन रहा था।

'इतना तो मैं भी जानता हूँ कि आदमीकी पहचान कैसे की जा सकती है। वेशभूषा, आकृति और केवल कुछ शब्दोंसे ही आदमी पहचाना जा सकता है। अब देखिये सामने मेजवाले व्यक्तिके विषयमें कह सकता हूँ कि वह कोई बिहारी जमींदार है। शान्तिपुरी धोती, चुन्नटदार कुरता और दुपलिया टोपी, सोनेके बटन, अँगूठियाँ, हाथकी घड़ी—सब मेरे ही अनुमानकी पुष्टि करते हैं। मुखकी आकृति—मूँछें, आँखें और चलने और बोलनेके ढङ्गसे निश्चित है कि वह एक बिहारी जमींदार है। मेरे इस अध्ययनका उपयोग एक गिरहकट अच्छी तरह कर सकता है।'

'आप तो काफी अनुभवी मालूम होते हैं। जिन्दगीमें शायद ही कभी आपको धोखा खाना पड़े।'

'बम्बईकी धूपमें मैंने २० साल तक अपने बाल सफेद किये हैं। अगर मैं सतर्कता और सावधानीसे न काम लूँ तो दिन-दहाड़े लुट जाऊँ।'

'आपकी जेब गिरहकटका बाप भी नहीं काट सकता।'

'खैर! यह तो है ही पर मैं बम्बईके गिरहकटोंकी एक बातकी बड़ी तारीफ करूँगा कि वे अमीरोंको ही लूटते हैं। वे पूरे साम्यवादी होते

हैं। उनका सिद्धान्त कहता है कि किसी धनी सेठकी जेबसे कागजकी तरह भरे हुए नोटके कुछ पुलिन्दे स्थानान्तरित कर दिये जाँय तो इससे सेठकी कोई बड़ी हानि नहीं होती पर दर्जनों मुफलिसोंका काम चल जाता है। क्यों आपका क्या खयाल है ?

'गिरहकटोंकी फिलासफीमें तो मतभेदकी कोई गुञ्जाइश नहीं दिखाई देती।'

'एक बात और, गिरहकट अपने वर्ग और पेशेके अन्य सदस्योंसे काफी ऊँचा उठा हुआ है। चोर और छिछोरों से उसकी कोई तुलना नहीं की जा सकती। साहसमें गिरहकटकी कोई समता करनेका साहस नहीं कर सकता—युद्ध भूमिमें लड़नेवाला सैनिक भी नहीं। मैं तो गिरहकटकी साहसिकताका इतना कायल हूँ कि यदि कोई गिरहकट मेरी जेब काटनेमें सफल हो जाय तो मैं खुश होकर दूनी रकम उसे पुरस्कार में दूँ।'

'बात तो आप सच कहते हैं फिर भी लोग न जाने क्यों गिरहकटके पकड़ जानेपर उसे बुरी तरह पीटते हैं।'

'वे मूर्ख हैं। अशिक्षित हैं। वे कलाविहीन सींग-पूँछवाले जानवर हैं। वे गुणीजनोंकी कदर नहीं कर सकते, कलाकारोंका आदर नहीं कर सकते। आप मेरी बात माने तो अपने पत्रमें कुछ साहसी गिरह-कटोंकी जीवनगाथा प्रकाशित करें। यहूदियोंकी तरह पीड़ित और प्रताड़ित इस गिरहकट समुदायका आप बड़ा उपकार करेंगे। गिरहकटी एक पवित्र जीविका है, एक निर्दोष व्यापार है।'

'आप बुरा न माने तो एक बात पूछूँ।'

'शौक से।'

'आप गिरहकटोंकी आखिर वकालत क्यों कर रहे हैं ?'

'इसलिए कि मैं खुद भी गिरहकट हूँ।'

मैंने दाँतों तले उँगली दाब ली।

'बम्बईमें मेरा एक अपना स्कूल है जिसमें बेकार युवक इस पवित्र पेशेकी शिक्षा पाते हैं। एक महीनेमें मैं उन्हें कमाने-खाने लायक बना देता हूँ।'

मैं आश्चर्यचकित नेत्रोंसे गिरहकट सरदारके व्यक्तित्वको पढ़ने और समझनेकी कोशिश कर रहा था।

'यदि कोई आपत्ति न हो तो अपनी इस मैत्रीपूर्ण मुलाकातके स्मृति स्वरूप मैं आपको कुछ चीजें भेंट करूँ।'

इसके पहले कि मैं कुछ कहूँ, उसने अपनी चाँदीकी मूँठवाली छड़ी और सोनेकी घड़ी निकालकर मेरे हाथोंमें पकड़ा दी।

आज प्रस्तुत पंक्तियाँ लिखनेके वक्त तक दोनों चीजें मेरे पास पड़ी हैं। पर मुझे इस बातकी बड़ी आशङ्का है कि गिरहकट दोस्तकी घड़ी और छड़ीके कारण किसी बड़ी विपत्तिके फन्देमें न फँसना पड़े। पाठकोंमेंसे यदि कोई सज्जन घड़ी और छड़ी चाहें तो मैं भेंट कर सकता हूँ बशर्तें कि आप मेरे दोस्तकी यादगारी अपने पास ही रखें— बेच न दें।



मेरे एक मित्र हैं, जब आईना देखते हैं तो उनका मुँह पिचक जाता है। बात यह है कि आईना उनके चेहरेका खुशामद तो कर नहीं सकता, न चेहरेके चेचकके गड्ढे या सफेद दाग ही छिपा सकता है। मित्रकी अधिक सुन्दर दिखाई देनेकी आशा आईनेकी असलियतसे टकराकर चूर हो जाती है। आदमी वास्तविकतासे घबराता है, सोचता है—क्या वह तनिक और सुन्दर नहीं दिखाई दे सकता? जितनी वह योग्यता रखता है क्या उससे अधिक योग्य नहीं समझा जा सकता

आदमीकी सबसे बड़ी कमजोरी है—आत्मप्रशंसा सुननेकी लालसा। मनुष्यके चरित्रका यह सबसे कमजोर अंग है। यह एक प्रकारकी बीमारी है जिसकी दवा है केवल खुशामद। रोगकी वृद्धिके साथ दवाकी मात्रा भी बढ़ती जाती है। धीरे-धीरे रोगी इस दवा और वातावरणका इतना आश्रित और अभ्यस्त हो जाता है कि इसके बिना जी नहीं सकता। मानव प्रकृतिका निचोड़ है कि आदमी आत्मप्रशंसासे प्रसन्न होता है और कटु टीकाकी वास्तविकतासे घृणा करता है। इसलिए यदि आप जीवनमें सफलता चाहते हों तो खुशामद करिये। मैं आपकी खुशामद नहीं करता कि आप मेरी बात मानिये ही। यह केवल जीवनका अनुभव आपको बतायेगा कि मेरी बात बावन तोले पाव रत्ती ठीक है।

खुशामद कोई बुरी चीज नहीं। अपनी तारीफ न कर दूसरोंकी प्रशंसा करना, अपनेको नगण्य समझ दूसरोंको बड़ाई देना—आपके हृदयकी महाशयता और महानता ही प्रगट करेगा। आप खुशामद नहीं कर सकते—इसका मतलब है आप दूसरोंसे खुशामद करवाना चाहते हैं। अपनेको इतना ऊँचा समझते हैं कि दूसरे लोग आकर आपके पैर चूमें, आपकी प्रशंसाके गीत गायें। समझदार लोगोंकी राय है कि शिखरपर पहुँचनेके लिए नीची सीढ़ीसे चढ़ना चाहिये, इसलिए घमण्ड और गरूरको ताकपर रखकर मेरी बात मानिते—खुशामद करिये।

मेरे पड़ोसमें एक मुंशीजी हैं। उन्हें जब शराब पीनेके लिए रुपयेकी जरूरत होती है तो श्रीमतीजीके सामने भूमिका बाँधते हैं।—'भई, आज तो बड़ी अच्छी लग रही हो, किस कम्बख्तकी शामत आयी है?' श्रीमती फूलके गुब्बारा हो जाती हैं और दालानसे उठकर कमरेमें जाकर बेकामका काम करने लगती हैं। मुँशीजी दूसरा तीर छोड़ते हैं। 'तुम्हारे रङ्गपर यह फालसाही साड़ी तो बड़ा गजब ढाती है।'

श्रीमतीजी मन ही मन चाकलेट चुभलाती रहती हैं। 'इसी रङ्गकी एक साड़ी कल डाक्टर टण्डनने खरीदी। रुपये नहीं थे नहीं तो तुम्हारे लिए भी एक ले आता।'

फौरन रुपये निकल आते हैं और मुंशीजी साड़ी खरीदनेके लिए 'चौक' जाते हैं। यह कहनेकी जरूरत नहीं कि वह रुपयोंका सदुपयोग किस प्रकार करते हैं।

मेरे एक दोस्त पी० डबलू० डी० में क्लर्क हैं। चार सालमें एक सौ चालीसतक पहुँचकर छकड़ा गाड़ी रुकी खड़ी है। अचानक एक दिन उन्हें मालूम हुआ कि दफ़्तरके बड़े बाबू कुछ शायरी भी करते हैं। फिर क्या उसी रोज शामको उनके मकानपर जा पहुँचे। दुआ-सलामके बाद पूछा—'साहब, सुना है आप कुछ गजल भी लिखते हैं।'

'अजी यूँही कुछ।'

'अरे वाह साहब, सुनाइये भी।'

इसके बाद बड़े साहब सुनाते हैं छोटे साहब सुनते हैं, और यह सुनने-सुनानेका ताँता रातको बारह बजे टूटता है। फिर तो छोटे बाबू-की आमदरफ़्त बढ़ती है। दफ़्तरमें भी पूछ लेते हैं—'बड़े बाबू कोई नयी चीज नहीं लिखी?'

इसका नतीजा यह होता है कि छोटे बाबूको अगले महीनेमें एक साथ बीस रुपये तरक्की मिल जाती है। क्या समझे आप?

मेरे एक रिश्तेदार दूकानदार हैं। चौकमें कपड़ेकी बहुत बड़ी दूकान है। छुट्टीका दिन था, मैं भी बैठा था। एक देवीजी सदलबल दूकानमें घुस आयीं। दूकानदार महोदय प्रेमसे गद्गद होते हुए बोले—आइये बहनजी! अबकी बहुत दिनोंपर दर्शन दिया। कहीं बाहर चली गयीं थीं क्या? अच्छा, बिटिया भी साथ हैं? ओह हो—बिटियाके लिए मैंने खास आर्डर करके अहमदाबादसे साड़ियाँ मँगायी हैं। हमारी बिटियाकी साड़ियोंकी पसन्द तो लाजवाब है।....अरे मुन्ने बाबू, वाह

भई, इधर तो आओ (गोदमें लेकर) अरे भाई जरा मुन्ने बाबूके लिए चाकलेट ले लेना। चाय-पानके लिए भी कह दो।

एक घण्टेके बाद देवीजी डेढ़-सौका सामान दूकानसे खरीदकर बाहर निकली। मैंने दूकानदारकी पीठ ठोककर कहा—उस्ताद दूकान खोलना होगा तो पहले तुम्हारे यहाँ शिरनी चढ़ाऊँगा।

पण्डित जनसेवकको गौशालेके लिए चन्देकी जरूरत हैं। सीधे सेठ उलूकचन्द गाँठपूरियाके पास पहुँचते हैं। 'धर्मराज', 'धर्मावतार', जैसे एक दर्जन विशेषण सुनते ही सेठजी मूछोंपर हाथ फेरने लगते हैं। पण्डितजी प्रशस्तियोंका दूसरा घूँट देते हैं। 'आप जैसे धर्मात्माओं-के कारण ही पृथ्वी टिकी हुई है।' 'आपके रहते भगवान कृष्णके हाथों मेवे-पकवान खानेवाली गौवें आज चारे और भूसेके लिए तरसें।'.... और दूसरे ही क्षण सेठजी करुणासे परिप्लावित हो बोल उठते हैं—

'मुणीमजी, पाँच सौका एक चेक काट दो।' और पण्डित जन-सेवक चेक लेकर घर आते हैं। बेजुबान जानवरोंके साथ जुबानदार जानवरोंकी भी पेट-पूजा होती है। खुशामद और चन्दाका मा-बेटीका सम्बन्ध है। सार्वजनिक संस्थाओंके प्रधान मन्त्री इस कलामें विशेष योग्यता प्राप्त करते हैं।

अमेरिकाके एक करोड़पतिको पत्र-प्रतिनिधियोंसे बड़ी चिढ़ थी। उसके घरमें अखबार-नवीसोंका प्रवेश निषिद्ध था। एक दिन किसी पत्र-प्रतिनिधिने करोड़पतिको अपने कुत्तेके साथ शामको पार्कमें बैठे हुए देखा। पत्र प्रतिनिधि पास ही से गुजरते हुए क्षण भर रुककर बोला—

'वाह! कितना सुन्दर कुत्ता है! महोदय, क्या मैं दो मिनट इसे खिलानेकी अनुमति पा सकता हूँ?'

करोड़पति उस व्यक्तिसे इतना प्रसन्न हुआ कि उसे न केवल अपने कुत्तेकी दिनचर्या और विवरण बताये बल्कि अपने साथ घर ले जाकर चाय पिलायी, अपने कुत्तोंकी 'कालोनी' दिखायी, अपनी जीवनगाथा

सुनायी, अपने व्यापारिक सफलताका रहस्य बताया—और कुछ दिनों पश्चात् उसे अपना प्राइवेट सेक्रेटरी बना दिया।

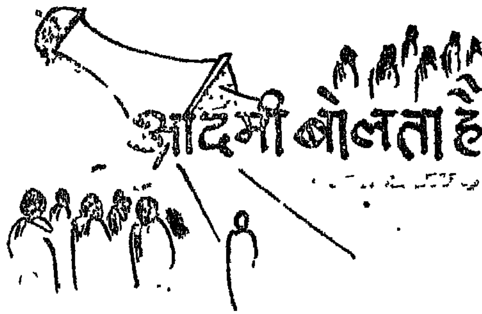
खुशामद एक अमोघ अस्त्र है। भीतर-बाहर, घर-दफ्तर सर्वत्र आप इसका प्रयोग सफलतापूर्वक कर सकते हैं। युद्धकालके नये शस्त्रास्त्रोंकी बादमें भी शान्तिकालीन इस महान् शक्तिशाली अस्त्रकी उपेक्षा नहीं की जा सकती।

यदि आप सम्पादक हैं तो लेखककी तनिक तारीफ कर देनेसे आपकी मेजपर लेख-कविताओंके ढेर लग जायँगे। यदि आप लेखक हैं और प्रथम पृष्ठपर परिचय सहित कविता और सचित्र लेख छपानेके इच्छुक हों और साथ ही पुरस्कारकी भी कामना करते हों तो आपको पत्र और सम्पादक दोनों की प्रशंसा करनी चाहिये।

यदि आप पीड़ित पति हैं और गृहयुद्धसे मुक्ति चाहते हैं तो मौके-बेमौके श्रीमतीजीके रूप-सौन्दर्य, बनाव-शृङ्गार, साड़ीके चुनाव तथा पाककलाकी थोड़ी-सी प्रशंसा कर दीजिये। श्रीमतीजी आपके ऊपर प्रेमवर्षा करने लगेंगी।

यदि आप किसी दफ्तरमें क्लर्क हैं तो प्रतिदिन बड़े बाबूके स्वास्थ्यके बारेमें अवश्य पूछताछ कर लीजिये। कभी-कभी उनके घरका चक्कर भी लगा दीजिये। जरूरत पड़नेपर बाजारसे तेल-साबुन, साग-भाजी लानेमें भी न हिचकिये। रोते लड़कोंको बहलानेकी कलामें भी अभ्यस्त रहना चाहिये। पाषाण हृदय बड़े बाबू भी इतनी योग्यता रहनेपर पिघल जाते हैं और वर्ष भरमें ही आप छोटे बाबूसे बड़े बाबू बन सकते हैं।

इसलिए जीवनमें सफलता चाहते हों तो मेरी बात मानिये और 'खुशामद करिये' का मूल मंत्र अपनी गाँठमें बाँध लीजिये। आप किसी भी परिस्थितिमें रहेंगे; यह आपकी सहायता करेगा, आफत-विपत्तिसे रक्षा करेगा। इसलिए इस खुशामदी दुनियामें यदि आपको जीना हो तो खुशामद करिये।



बूढ़े ब्रह्माने जब बीबी हौवाके पति बाबा आदमको बनाया तो उनके सामने समस्या थी कि आदमीको वाक् शक्ति प्रदान की जाय अथवा नहीं। गूँगी सृष्टिकी कल्पना कोई बुरी नहीं थी पर बीबी हौवाकी कठिनाइयोंका ख़याल करके ब्रह्माने आदमीको सवाक् बना दिया। फिर तो सृष्टिमें वह तुमुल कोलाहल मचा कि बादमें ब्रह्माको अपनी भूलपर पछताना पड़ा। आदमीको वाक्शक्ति प्रदान करना ब्रह्माके सृष्टि-निर्माणकी सबसे बड़ी गलती थी।

आदमी स्वभावतः ही कोलाहल-प्रिय है। गुफाओंमें रहनेवाला प्रागैतिहासिक मानव भी एकाकीपनका भार दूर करनेके लिए कभी-कभी जोरोंसे चिल्लाया करता था। आज भी देहातोंके सामूहिक नृत्यगान आदमीके कोलाहल-प्रेमका ही परिचय देते हैं। कान फाड़नेवाला नगरका कोलाहल भी आदमीके मस्तिष्कको अग्राह्य नहीं। आजका नागरिक मानव शहरोंका शोर-गुल इतना पसन्द करता है कि यदि आप उसे गूँगोंके नगरका सम्राट भी बना दें तो वह एक सप्ताहमें सिंहासन त्यागकर घर वापस चला आयेगा।

आदमी शुरूसे ही शोरगुल करता आया है। यह उसका स्वभाव बन गया है। उसकी प्रकृतिमें परिवर्तन नहीं किया जा सकता। वह चुप नहीं बैठ सकता। न आप उसे चुप रहनेके लिए बाध्य ही कर सकते हैं। आदमीका मस्तिष्क स्वभावतः सङ्घर्ष और अशान्ति चाहता है, शान्ति और निष्क्रियता नहीं। महायुद्ध आदमीके कोलाहल-प्रिय मस्तिष्ककी ही स्वाभाविक उपज है।

बोलना साधारण लोगोंके लिए तो जीवन बन गया है पर बड़े लोगोंसे भी बिना बोले नहीं रहा जाता। बड़े-से-बड़े महात्मा भी बोलनेके लिए उत्कण्ठित रहते हैं। और तो और महात्मा गाँधी भी चुप नहीं रह सके। बोलनेके लिए ही उन्होंने भारत में भाषण-स्वातन्त्र्य-आन्दोलन प्रारम्भ किया था।

बोलनेके लिए आदमी व्याकुल रहता है। पति-पत्नीमें झगड़ा होता है तो बोलना बन्द हो जाता है। दोनों एक दूसरेसे बोलनेको उत्कण्ठित रहते हैं पर पहले कौन बोले—इसीपर प्रणय-कलहकी हार-जीत जो निर्भर रहती है। अधिक-से-अधिक एक, दो, तीन दिनके अन्दर ही यह गृहयुद्ध समाप्त हो जाता है और भावुक पति अपनी स्नेहमयी पत्नीसे जब पहली बार बोलता है तो हृदय की गठरी खोलकर रख देता है। बिना बोले पति-पत्नी भी नहीं रह सकते।

जन्म लेते ही बच्चा मुँह खोलता है और बोलता है—'मैं' अर्थात् मैं आ गया। आगमनकी सूचना पाते ही घर-परिवारमें हलचल मच जाती है।

निर्दोष बच्चेके रोने-गानेपर किसीको क्या आपत्ति हो सकती है। कठिनाई तो आरम्भ होती है जब आदमी बोलता है। आदमीकी आवाज कुछ मधुर तो होती नहीं—इसलिए कानोंमें अमृत नहीं घोल सकती। आदमी क्या बोलता है, इसे समझनेके लिए कितनी मानसिक शक्तिका अपव्यय होता है, इसका अनुमान कोई अर्थशास्त्री ही कर सकता है! जिह्वाके खोलते ही एक हजार एक भाषाओंके साथ उतनी ही समस्याओंका जन्म होता है। बोलना और समझना दो बातें हैं, दोनोंकी अलग-अलग समस्याएँ और उलझनें होती हैं जिन्हें सुलझानेमें ही आदमीका दिमाग और जीवन लगा रहता है, फिर भी अन्तिम दिन कार्य अधूरा रहता है। आदमी जब बोलना बन्द करता है, वह दृश्य भी बड़ा करुण होता है। परिवारके सभी सदस्य आदमीकी अन्तिम बोली अन्तिम बार सुननेको कान लगाये खड़े रहते हैं!

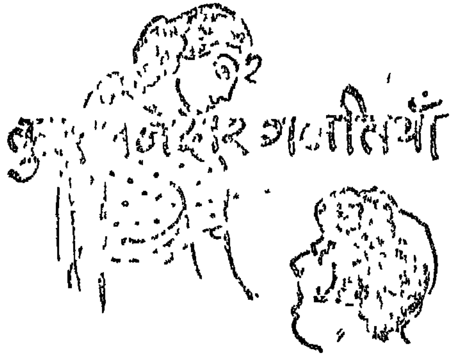
आदमीकी जबान आदमीको आदमी बना देती है। यदि बोलते न होते तो जिन्ना मलाबार हिलके किसी नवाबके फर्राश होते, हिटलर किसी चौराहेपर बैठकर जूते सीते, मुसोलिनी किसी दफ्तरकी दरबानी करते और चर्चिल किसी सड़कपर आश्चर्य मलहमका विज्ञापन करते। स्टालिनको जो महत्त्व प्राप्त होता है वह जिह्वा-देवीकी देन है। आदमी जबतक बोलता है तभीतक आदमी है। संसारकी बड़ी-से बड़ी मशीनों, रेडियो, अखबार, सरकारके पीछे आदमी ही बोलता है।

आदमी जब बोलता है तो बोलता ही जाता है, सुननेका नाम नहीं लेता, यह सोचनेके लिए भी नहीं रुकता कि जो कुछ वह कह रहा है वह सब सत्य तो है! इस प्रवाहमें बहुत-सी ऐसी बातें निकल पड़ती हैं जो वायुमण्डलको विषैला बना देती हैं। आदमीकी गर्वोक्तियाँ

सभीको सह्य हों, यह असम्भव है। फलस्वरूप ईर्ष्या-द्वेषका जन्म होता है, सङ्घर्षकी नीव पड़ती है। जिह्वाकी प्रतियोगिता शुरू होती है और एक समर-सा छिड़ जाता है। आदमी जो कुछ कहता है, चाहता है दूसरे सब उसे मान लें। यह सत्य आदमी आदमीमें अन्तर पैदा करता है। बात बढ़ती है, अन्तर बढ़ता है और शक्ति बढ़ती है। आदमी अपनी-अपनी शक्तियोंको अपनी बात रखनेके लिए लगा देता है। आदमी अकेला होता है तो द्वन्द्व होता है और यदि उसके पीछे एक देश या समूह हुआ तो अच्छा खासा युद्ध या महासमर छिड़ जानेकी नौबत आ जाती है। इन सबके पीछे रहती है किसी एक आदमीकी आवाज—जो युद्ध करा सकता है और शान्ति भी।

महासमर क्या है—कुछ चुने हुए आदमियोंकी आवाज। जर्मनीके पीछेसे हिटलर बोलते हैं, ब्रिटेनके टापूसे चर्चिल बोलते हैं, अमेरिका महाद्वीपसे रूजवेल्ट बोलते हैं, रूससे स्टालिन चिल्लाते हैं—इन सब-की आवाजें आकाशमें टकराती हैं, फलस्वरूप एक भीषण महायुद्ध हमारी आँखोंके सामने है। इसके पीछे है आवाजोंकी टकराहट, भाषणोंकी प्रतियोगिता और जबानोंका सङ्घर्ष। इनमेंसे प्रत्येक चाहता है बोलना—और चाहता है बाकी उसकी बातें सुनें। इनमेंसे कोई भी किसीकी सुनना नहीं चाहता—इन्हें कौन समझाये? यदि आदमी चुप रहता तो उसे समझनेमें अधिक सुगमता होती, सृष्टि अधिक सुन्दर होती, प्रकृति अधिक शान्त होती और आदमीकी जिन्दगी अधिक आनन्दमयी बन जाती।

अन्तमें मैं आपको आदमीकी नयी परिभाषा भी बता दूँ—आदमी बोलनेवाला प्राणी है अर्थात् आदमी बोलता है।



कुछ मजेदार गलतियाँ

यदि आपकी स्मरण-शक्ति कमजोर नहीं है तो मैं आपसे एक बात पूछूँ—क्या आपको कभी अपनी बेवकूफीपर हँसी आयी है? दूसरोंकी बेवकूफीपर तो आप दर्जनों बार हँसे होंगे, दोस्तोंकी खब्तुलहवासी (अनवधानता) का काफी मज़ाक उड़ाया होगा, दूसरोंकी ज़रा-सी गलतीपर दिल खोलकर हँसे होंगे—पर क्या आपको याद है कि जब आप किसी छोटी-सी भद्दी भूलकी वजहसे लज्जित हुए थे तो कैसा अनुभव हुआ था। अपने ऊपर हँसते हुए दोस्तोंकी हँसीमें

साथ देना एक मनोरञ्जक एवं कटु अनुभव है। विवश होकर ही आपको अपने ऊपर हँसनेवालोंका साथ देना पड़ता है। नहीं तो कौन ऐसा बेवकूफ होगा कि बेवकूफ भी बने और हँसे भी?

यहाँ मैं आपके सन्मुख अपने जीवनकी कुछ ऐसी ही सरस एवं मनोरञ्जक अनुभव उपस्थित करता हूँ। इन्हें सुनकर यदि आप भी मेरी मूर्खतापर हँसनेवालोंके साथ सम्मिलित हो सकें, तो मैं अपनी मूर्खता सार्थक समझूँगा।

एक बारका जिक्र है कि अपने एक दोस्तके साथ सिनेमाका टिकट खरीद रहा था। दोस्त बगलमें ही खड़ा था और मैं खिड़कीके अन्दर टिकट बाबूसे रेजगारीके लिए उलझ रहा था। पर टिकट बाबू जिन्नाकी तरह अकड़ रहे थे कि स्वराज लेना हो तो पाकिस्तान दो याने टिकट लेना हो तो पहले रेजगारी दो। विवश होकर मैंने बगलके दोस्तकी जेबमें हाथ डाला—पर जेब खाली थी। अभी-अभी तो मैंने उसकी जेबमें रेजगारी रखी थी—कम्बख्त भीड़में भी मजाक करता है! यहाँ तो गर्मीके मारे दम घुट रहा है, और हजरतको—लेकिन यह क्या! मैंने सर बाहर किया तो देखा कि मैं एक अजनबीकी जेब टटोल रहा था। मुझे काटो तो खून नहीं। आखिर वह क्या समझेगा और कम्बख्त टहल कहाँ गया....?

'माफ करियेगा'—मैंने दबी आवाजमें कहा—'मैंने समझा यह मेरे दोस्तकी जेब है।'

'कोई हर्ज नहीं मैं भी आपका दोस्त ही हूँ। और यह जेब भी अपनी ही समझिये।' अजनबीने हँसते हुए कहा। पर मुझे सन्तोष नहीं हो रहा था। बोला—'मैं कैसे आपको यकीन दिलाऊँ कि मैंने किसी गलत इरादेसे आपकी जेबमें हाथ नहीं डाला?'

'अरे साहब, रहने दीजिये। मैंने आपको वह नहीं समझा जो आप अपनेको समझनेकी गलती कर रहे हैं।'

'शुक्रिया !'

वह तो कहिये आदमी शरीफ था नहीं तो जरा-सी गलतीके कारण वह सारे मीठे-खट्टे अनुभव करने पड़ते जो गिरहकटको पकड़े जानेपर होते हैं। किसी अजनबीकी जेबमें हाथ डाल देना ही काफी सबूत है। उस समय कोई आपसे यह न पूछेगा कि आपका इरादा क्या था, या आपसे गलती हो गयी क्या ? पर शायद आप जानते हों कि प्रत्येक नियमके साथ अपवाद भी लगा होता है। इस घटनाको अपवाद ही समझिये। उस दिनसे मैं जब कभी किसी जेबमें हाथ डालता हूँ तो पहले अच्छी तरह इत्मीनान कर लेता हूँ कि यह वही जेब है जिसमें मुझे हाथ डालनेका अधिकार है।

जेब बेजान चीज है इसलिए बदल भी सकती है। पर दोस्तका बदलना भी क्या सम्भव है ? कल्पना कीजिये तो !

एक बार चौककी सड़कपर मैं अपने एक परिचित मित्र सतीशके साथ आ रहा था। राहमें किताबकी दूकान देखकर पुस्तकें खरीदनेके लिए रुका पर बगलके दोस्त निःशुल्क पाठक हैं यह याद आते ही जेबमें पैसे वापस रखकर चल दिया। दोस्तके कन्धेपर बड़ी बेतकल्लुफीसे हाथ रखे हुए चल रहा था। अचानक याद आयी कि सतीशने मेरी दर्जनों पत्रिकाएँ हजम कर रखी हैं। मैंने उसका कन्धा झकझोरते हुए पूछा—क्यों बे, मेरी किताबें कब लौटायेगा ? बेचकर खा गया क्या ? इधर दोस्तके चेहरेपर दृष्टि गयी तो देखता हूँ कि एक सर्वथा नवीन चेहरा आश्चर्यचकित-सा सामने है।

'माफ करियेगा, आप वह नहीं हैं जिनसे मेरा मतलब था। अपरिचित महोदय हँसकर आगे बढ़ गये और मैं सतीशको अपना गुस्सा उतारनेके लिए तलाश करने लगा।

दोस्त बदलना कोई बड़ी बात नहीं पर ससुराल बदलनेकी बात आप मजाक समझेंगे। विश्वास मानिये मेरे साथ यह घटना वास्तवमें

घटित हो चुकी है। आजके तीन साल पहलेकी बात है। नयी-नयी मेरी शादी हुई थी। ससुराल मैं पहली बार जा रहा था। मेरे ससुर इलाहाबादमें बैरिस्टर थे। सालियोंको आश्चर्यचकित करनेकी गरजसे मैंने आनेकी सूचना भी नहीं भेजी। रातको दस बजे धड़धड़ाता हुआ जार्ज टाउनके बँगलेके सामने जा खड़ा हुआ। मैंने पूछा—बैरिस्टर साहबका यही बँगला है न! टाँगेवालेने कहा—जी हाँ! बँगलेसे नौकर निकला—तो टाँगेवालेने कह दिया—सामान भीतर ले जाओ, बैरिस्टर साहबके दामाद हैं।

नौकरने भीतर खबर की। बँगलेमें हलचल मच गयी। मैं जाकर ड्राइङ्गरूममें जम गया। बँगलेकी सजावट, रूपरेखा ध्यानसे देख रहा था। दरवाजोंकी दराजसे चेहरेकी अस्पष्ट झलक व चूड़ियोंकी झनक भी आने लगी। भीतरसे बुलावा आया और मैं ज़नानखानेमें जा पहुँचा। लम्बा घूँघट काढ़े हुए किसीने कहा—'बैठो बेटा'। शायद मेरी सास थीं। मैं बैठ गया, मेरे सामने नाश्तेकी प्लेटें रखी हुई थीं। बगलके दरवाजेकी दराज़ोंमें कानाफूसी हो रही थी। मेरे सामने बैठी हुई सासजी घरका हाल-चाल पूछ रही थीं। मुझे चुप बैठे देखकर बोलीं—'अरे शर्माते क्यों हो, खाओ न!' मैंने अँगूरके गुच्छे पर हाथ बढ़ाया ही था कि कोई सूटबूट धारी सज्जन भीतर आ गये। मैंने नौकर-को कहते सुन लिया था कि 'आज मेहमान आये हैं।' मैं उन्हें देखकर चकित हुआ, वह मुझे। दोमेंसे कोई किसीको भी नहीं जानता था।

'कहिये आपका कैसे आना हुआ?' मुझसे प्रश्न हुआ।

'आप कौन हैं?'—मैंने भी पूछा।

'मैं इस मकानका मालिक हूँ। जानना चाहता हूँ—आप कौन हैं, कहाँसे आये हैं।'

'मैं मि० आनन्दमोहन बैरिस्टरका दामाद हूँ—क्या यह उनका बँगला नहीं?'

'जी नहीं, एक महीना हुए वह इसे छोड़कर चले गये। मैंने इसे खरीद लिया है।'

'माफ करियेगा, मैंने आप लोगोंको व्यर्थ तकलीफ दी।'

....और बोरिया-बिस्तर बाँधकर टाँगेपर बैठा रात १२ बजे मैं असली ससुराल ढूँढ़ने निकला।

मैंने मन ही मन कहा—गनीमत हुई कि मामला नाश्ते तक ही पहुँचा था और गलती पकड़ ली गयी। नहीं तो मैं साफ नये बैरिस्टर 'ससुर' की कानूनी चपेटमें आ गया था।

बँगलों के हेर-फेरसे ससुराल बदल सकती है पर बीबी बदल जाने की बात सुनकर आप ताज्जुब करेंगे।

हालकी ही बात है। मेरी ससुरालमें सालीकी शादी थी। सपत्नीक उपस्थित था। श्रीमती कार्य-व्यस्त थीं। घड़ीभर बात करनेकी भी फुरसत नहीं मिलती थी। मैंने शिकायत की, तो बोलीं—'फालतू आदमी हो—कुछ काम-धाम तो है नहीं, जब देखो मेरे पीछे पड़े रहते हैं।'

मुझे भी गुस्सा आ गया। सुबहसे शामतक गुस्सा रोका। शामको नहीं रहा गया तो श्रीमतीजीकी तलाशमें भीतर घुसा। देखा, मेरी ओर पीठ किये अपने कमरेके दरवाजेपर खड़ी थीं। रेशमी बार्डरकी, मेरे पसन्दकी गुलाबी साड़ी पहने हुए थीं। दबे पाँव पास जाकर मैंने कहा—'भई, ऐसी भी क्या नाराजी, दो मिनट बोल तो लिया करो। एक बार आँखें उठाकर देख तो लो....' इतनेमें श्रीमतीजीने मेरी ओर रुख किया तो मुझे सौ बिच्छुओंने एक साथ डंक मार दिया। मैं एक अपरिचित महिलाको सम्बोधित कर रहा था।

'आप क्या चाहते हैं?'

'यह साड़ी जो आप पहने हैं, क्या आपकी ही है?' मैंने घबराकर पूछा।

'जी नहीं, आपने खरीदकर दी है !'

मैं चुप पड़ गया। यह खबर पूरे घरभरमें फैल गयी।

श्रीमतीजी आयीं तो बोलीं—'औरतकी पहचान साड़ीसे नहीं, सूरतसे की जाती है, समझे ? फिर मत धोखा खाना।'

और मैंने उसी दिनसे श्रीमतीजी की सीख गाँठमें बाँध ली।

पत्र-व्यवहार करनेमें भी बड़ी होशियारीकी जरूरत होती है; वरना अर्थका अनर्थ हो जाता है। एक बार मैंने अपने पिताजी और श्रीमतीजीको अलग-अलग ख़त लिखा और गलतीसे एक दूसरेके लिफाफेमें भरकर भेज दिया। अब इसका परिणाम आप कल्पना करके मालूम कर सकते हैं। पिताजी तो चुम्बन-आलिंगन और प्यारकी भर-मारसे ऊब गये। और श्रीमतीजी सूखे प्रणामसे असन्तुष्ट क्या,—नाराज हो गयीं। पिताजीने चिट्ठी वापस कर दी। उसे दुबारा पढ़ा तो ऐसा लगा....सीता होतीं तो उनसे पाताल-प्रवेश करनेका रास्ता पूछता।

पिताजीने मेरे पत्रपर एक टिप्पणी लिख दी थी—'एकबारमें केवल एक पत्र लिखा करो।' अब जब मैं पत्र लिखता हूँ तो दूसरा पत्र लिखने की गलती नहीं करता।

मेरे जीवनकी सबसे बड़ी गलती तो रह ही गयी। वह भी एक महान दुर्घटना थी। मैं अपनी श्रीमतीजीको ससुरालसे विदा कराकर ला रहा था। उन दिनों श्रीमतीजी मुझसे परदा करती थीं इसलिए उन्हें जनाने डब्बेमें बिठाकर मैं मरदाने डब्बेमें बैठा। कालेजके दिनों-के दो एक लंगोटिया यार मिल गये। बातों बातोंमें ही सफर कट गया। बनारस उतरकर हम प्लेटफार्मके बाहर आये, सवारी की। घर पहुँचे तो सामने खड़ी छोटी बहनने पूछा—भाभी कहाँ है ?

'अरे उसे तो गाड़ीमें ही छोड़ आया।' कहकर मैं स्टेशन दौड़ गया। यह कहिए श्रीमतीजी थोड़ी पढ़ी-लिखी भी थीं—नहीं तो सीधे

पेशावर पहुँच जातीं। मैं श्रीमतीजीको स्टेशन पर ढूँढ़ता रहा और वे घर पहुँच गयीं।

ये भूलें मेरे जीवनकी प्यारी स्मृतियाँ हैं। जब कभी याद आती हैं तो हलकी-सी हँसी ओठोंपर आ जाती है और सोचता हूँ कि मैं भी कैसा बेवकूफ़ हूँ!



असत्य के प्रयोग

गांधीजी सत्यका प्रयोग करके महात्मा बन गये और मैं.... भला गांधीजीसे प्रतियोगिता क्या करूँ। इसलिए अपने लिए मैंने एक सर्वथा मौलिक क्षेत्र चुना है। मैंने निश्चय किया कि जीवनमें केवल असत्यका प्रयोग करूँगा और महात्मा नहीं तो कोई न कोई आत्मा अवश्य ही बन जाऊँगा। असत्य जीवनकी एक साधना है, तपस्या है, व्रत है। सत्यका मार्ग सरल और सीधा है और असत्यका मार्ग कठिन और कटकाकीर्ण। इसलिये मैंने अपने

जीवनको आदर्श और नैतिकताकी कसौटीपर कसनेके लिए इस कठिन मार्गको ही अपनाया है।

आप समझते हैं कि झूठ बोलना बिलकुल आसान है। जी नहीं, सच बोलना, जितना सरल है, असत्यका प्रयोग उतना ही कठिन।

सच पूछिये तो यह एक कला है। हरेक इसका प्रयोग भी नहीं कर सकता। केवल थोड़ेसे विशेषज्ञ ही इस कलाका उपयोग करनेमें समर्थ हो पाते हैं।

असत्यके प्रयोगके लिए असाधारण योग्यताकी आवश्यकता होती है। इसके लिए मनोविज्ञानका ज्ञान बहुत जरूरी है। वाग्शक्ति, इच्छाशक्ति, और यथेष्ट साहसका रहना भी आवश्यक है। किसीके मुखपर झूठ बोलना बहुत बड़े नैतिक साहसका काम है। कमजोर दिल-दिमागवाले झूठ नहीं बोल सकते। इसलिये संसारमें सफलता भी नहीं पा सकते। झूठ बोलते समय दिल धड़कना, जुबान लड़खड़ाना, आँखें नीची कर लेना इच्छाशक्ति और साहसका अभाव प्रदर्शित करता है।

यह एक प्रकारकी मानसिक कमजोरीका भी लक्षण है। इससे यह भी मालूम होता है कि आपमें आत्मविश्वासकी कमी है। यदि आप झूठ नहीं बोल सकते तो कुछ भी नहीं कर सकते।

सांसारिक सफलताकी पहली सीढ़ी है झूठ बोलना। इसे पारकर ही आप खुशामदकी सीढ़ीपर पहुँचते हैं। इसके बाद तो आप खुद ही सीढ़ीपर सीढ़ी चढ़ते जायँगे और शीघ्र ही सफलताके उच्च-शिखरपर पहुँच जायँगे।

एक करोड़पति व्यापारीसे मैंने उनकी सफलताका रहस्य पूछा तो हँसते हुए उन्होंने एक सूत्र सुनाया—'असत्यं खुशामदं घूसं।' 'सत्यं शिवं सुन्दरम्'से यह सूत्र कम सुन्दर नहीं है। असत्यम्का प्रथम पाठ ही आज मैं भी आपको दे रहा हूँ।

वकीलोंका ही उदाहरण लीजिये। जो जितना ही ज्यादा झूठ बोलता है उतना ही सफल वकील गिना जाता है। नया हो या पुराना वकील झूठ बोल कर ही जीता है। नये वकीलसे पूछिये—'भाई, प्रैक्टिस कैसी चल रही है। तो उत्तर मिलेगा—'क्या बतायें यार, कामके मारे दम मारनेकी फुरसत नहीं मिलती। अभी आज बलियासे लौटा हूँ और कल आजमगढ़ जा रहा हूँ।'

और सच पूछिये तो इन वकील साहेवके जेबमें घर वापस जानेके लिए एक दुअन्नीसे अधीक न निकलेगा लेकिन बेचारे अभी असत्यके प्रयोगमें प्रैक्टिस जमा रहे हैं।

मेरे एक डाक्टर मित्र हैं। बड़ा-सा साइनबोर्ड लगाकर एक बड़ी-सी दूकान पर बैठते हैं। कभी बेकार होता हूँ तो उनके पास बैठ जाता हूँ।

'कहो डाक्टर, तबीयत तो ठीक है?'

'कुछ न पूछो यार एक मरीजने परीशान कर रखा था। कारबङ्कलका केस था? कितना सीरियस तुम जानते हो। मगर वाहरे होमियोपेथी! आपरेशन करनेकी जरूरत ही नहीं पड़ी। उसके बाद पूरे एक दर्जन कारबङ्कलके केस मेरे पास आये पर....।

'अच्छा चलूँ डाक्टर।'

अब यह डाक्टर साहब चाहे दिन भर बैठकर मक्खी ही क्यों न मारते रहें पर मेरे दिमागमें यह बात जमानेकी कोशिश कर रहे थे कि अगर कभी कारबङ्कल हो तो सीधे मेरे पास चले आना।

असत्यके प्रयोगमें सफलता मिले या न मिले प्रयोगको जारी रखना चाहिये। कभी हताश न होना चाहिये। मैं इसी सिद्धान्तका समर्थक हूँ। समय-समयपर मैं असत्यका प्रयोग करता रहता हूँ यद्यपि दुर्भाग्यसे सफलता कभी मेरे पाले नहीं पड़ी फिर भी मैं हताश नहीं होता।

मैं अपनी श्रीमतीजीसे परेशान हूँ। मेरा प्रयोग संसारमें सब जगह चल जाय पर घर पर नहीं चलता।

एक रोज रात घर लौटनेमें देर हो गयी। दो बज गये थे। तिरछी नजरसे श्रीमतीजीने पूछा—'कहाँ रहे'?

'ऐसे ही जरा मुर्दनीमें चला गया था।'

'कौन मरा?'

'बेचारे रमेश की सास मर गयी।'

'कौन रमेश?'

'अपना रमेश जी!'

'अच्छा, वह तो आज तुम्हें पार्टीमें ले जानेके लिए आया था।'

लीजिये सब कुछ गुड़-गोबर हो गया। कम्बख्तको आज ही मेरे घरपर आ टपकना था। लेकिन उस बेचारेका भी क्या कसूर! उसे क्या मालूम कि मैंने अपनी जान बचानेके लिए आज उसकी सासको जानसे मारनेवाला हूँ। खैर!

सफरकी बात है। एक बार मैं दिल्ली जा रहा था, दिल्लीमें मेरी ससुराल है, इसलिए सेकेण्ड क्लाससे कम सफर करना भारत सरकारका अपमान करना है। मैं भी जरा रौबमें था। बगलके बर्थवाले साहब बोले—

'जी आपका परिचय।'

'मैं हूँ एम० एल० शाह एक्जीक्यूटिव इञ्जीनियर लखनऊ।'

'जा कहाँ रहे हैं?'

'दिल्ली—'

'दिल्ली में कहाँ रहते हैं।'

'मैं रायबहादुर करमचन्दका लड़का हूँ।'

'कौन रायबहादुर?'

'अजी चाँदनी चौकके।'

'उनके तो कोई लड़का नहीं।'

'मैं उनका भतीजा हूँ।'

'मैं अच्छी तरह जानता हूँ उन्हें कोई भतीजा नहीं केवल एक ही लड़की है।'

'जी मैं उनका दामाद हूँ—एक ही बात है।'

'मगर उनका दामाद तो मैं हूँ।'

ओफ! ऐसी बड़ी भूल मेरे जीवनमें कभी नहीं हुई। वास्तवमें मेरे ससुर रायबहादुरके प्राइवेट सिक्रेटरी भर हैं। मैं इस रिश्तेका नाजायज फायदा उठाना चाहता था।

'क्यों साहब आप कह रहे थे कि लखनऊके आप इञ्जीनियर हैं।'

'मैं भी लखनऊमें रहता हूँ।'

'जी मैं ओवरसियर हूँ पर जल्द ही मेरा प्रमोशन होनेवाला है।'

बात जमी नहीं। और मुझे चुप रहना पड़ा। अगले स्टेशनपर गाड़ी खड़ी होते ही उतरकर दूसरे डिब्बेमें बैठ गया।

सोचता हूँ यह तो प्रयोग है, हमेशा सफलता ही तो मिलती नहीं इसलिए मेरा उत्साह भङ्ग नहीं होता। प्रयोग जारी है।



रविवारको सुबह इत्मीनानके वातावरणमें जो नौ बजे नींद खुलती है तो देखता हूँ कि सप्ताह भरका बचा-खुचा काम रविवारके लिए ठेलनेकी आदतके कारण आज फुटकर कामोंका पहाड़ खड़ा है। रविवार पूर्ण विश्रामका दिन कहा जाता है, पर मेरे लिए पूरा कामका दिन है। चिन्ताकुल चेहरेपर हाथ फेरता हूँ तो उँगलियाँ दाढ़ीमें जा अटकती हैं। दिवसका प्रारम्भ दाढ़ीसे क्यों न किया जाय।

'कहो भाई क्या हो रहा है?'

दरवाजा खोलते ही सामने मिर्जा साहबकी मनहूस सूरत दिखाई पड़ती है।

'कहो क्या खबर है?'

'रातको नींद खूब अच्छी आयी!'

'अरे कोई नयी खबर?'

'आपका खयाल है कि मैं रातको सोता नहीं—अखबार छापता हूँ।'

'तुम तो भई मजाक करते हो।'

'आप से मजाक? नहीं, अभी उस्तरा निकालने जा रहा था कि आप आ गये!'

'तो मौकेसे आया।'

'हाँ आपके आजानेसे सहूलियत तो होगी ही।'

'हाँ, हाँ, बातों-बातोंमें दाढ़ी भी अच्छी बनती है।'

'बातोंके तो आप उस्ताद ठहरे। काश दाढ़ीके भी होते तो मेरे समयका सदुपयोग हो जाता।'

'रिटायर्ड डिप्टी कलक्टरसे दाढ़ी बनवाओगे—है इतनी हिम्मत?'

यहाँ मिर्जा साहबकी थोड़ी तारीफ कर दूँ। मिर्जा साहब उस जमानेके डिप्टी हैं जब केवल 'किङ्ग रीडर' खतम कर लेने पर लोग डिप्टी कलक्टर बना दिये जाते थे। डिप्टी साहबका लड़का बी० ए० पास करनेपर भी नायब तहसीलदार ही हो पाया इसका इन्हें बड़ा अफसोस है। आजकलके पढ़े-लिखे लड़कोंकी योग्यताकी आलोचना करनेमें उनकी जुबान कभी नहीं थकती। जिस समय वे अपने संस्मरण सुनाने लगते हैं तो कानोंकी मुसीबत आजाती है। दुर्भाग्यसे मिर्जा साहबको जबसे अवकाश मिला है, मेरे पड़ोसी बन गये हैं और वे अपने अवकाशका उपयोग प्रायः मेरे मकानपर और पेंशनका उपयोग शराबकी दूकानपर करते हैं। इसे मैं पड़ोसकी लाचारी समझकर

बर्दाश्त कर लेता हूँ। मिर्जा साहबकी सफेद सन जैसी दाढ़ी देखकर मुझे दया भी आजाती है—इसीलिए मिर्जा साहबकी जिन्दगीके बाकी दिन सरस बनानेमें यथासम्भव सहायक हो लेता हूँ।

दो घण्टे दिमाग चाटनेके बाद मिर्जा साहब बिदा ही हुए थे कि मेरे दरवाजा बन्द करनेके पहले ही चौबेजी अन्दर दाखिल हो गये। कहने-सुननेकी प्रतीक्षा किये बिना ही आरामसे आप कोचपर प्रतिष्ठित हो गये। बोले—

'चाय-वाय पी चुके ?''

'जी नहीं।'

'तो मँगवाओ।'

चौबेजी जिस अन्दाजसे आर्डर दे रहे थे मालूम पड़ता था जैसे मेरा मकान कोई रेस्टराँ हो और मैं कोई 'ब्वाय'। बात यह है कि जिस मकानमें चौबेजी बैठे हुए थे वह चौबेजीके बाप-दादोंका था और चौबेजी उसके वर्त्तमान स्वत्वाधिकारी थे। मैं केवल किरायेदार था। स्वभावतः चौबेजीको रोज मेरे घर चाय पीनेका जन्मसिद्ध अधिकार था। फिर महल्लेमें शायद ही किसी मकान-मालिकका साहस हो जो चौबेजीको अपने मकानमें आनेसे रोक सके। चौबेजी आजीवन पेंशन ही लेते रहे—कभी न तो कोई काम किया, न नौकरी ही। बाप दादे मारवाड़ियोंकी पुरोहिती करके काफी कमा गये हैं। अब पुरोहिती करना चौबेजी शानके खिलाफ समझते हैं। बङ्कमें जमा किये हुए रुपयोंसे काफी सूद आजाता है जो चौबेजीको भाँग-बूटी और अकेली चौबाइन-जीके लिए काफी होता है। चौबेजीमें एक बहुत बड़ी कमजोरी है वह यह कि जबानके बहुत चटोरे हैं। महल्लेके किसी घरमें कोई नयी चीज बने और चौबेजी न चखें—यह असम्भव है। इन्हीं गुणोंके जोरसे चौबेजी चन्द्रचूड़ चौबेसे आलूचाप चौबे बन गये हैं।

चौबेजीको चाय तो पिलानी ही पड़ेगी। मैंने नौकर भेजकर

तुरत बगलके होटलसे एक प्याली चाय मँगवा ली। चाय देखकर चौबेजी चौंके।

'यह क्या बाजारसे मँगवायी ?''

'क्या बताऊँ घरमें बीमार पड़ गयी हैं।'

'तो पहले क्यों नहीं कहा, क्या बुखार है ?'

'जी हाँ, मलेरिया।'

'तो अभी दवा घरसे लाये देता हूँ, बड़ी पुरानी चीज है। मेरे दादाके हाथकी दी हुई है।'

'अरे चाय तो पी लीजिये !'

'हाँ चाय तो भूल ही गया।'

चौबेजी प्यालेको चाय सोखकर घर दवा लेने चले गये।

ज्योंही दरवाजा बन्द किया तो श्रीमतीजी कमरेमें आयीं।

मैंने कहा—'बुखार इतनी जल्दी पीछा छोड़ देगा इसकी आशा न थी।'

'यह अच्छी रही बुखार तो आपका उतरे और बीमार मैं बनूँ।'

'माफ करना, तुम्हारा जरा-सा नाम लेनेसे मेरा बुखार दूर भागता हो तो क्या बुरा है....।'

'पर दवाकी फीस ?'

मैं चुकाने ही जा रहा था कि दरवाजेपर फिर खटपट हुई। यह कौन नयी मुसीबत आयी। मैं चुप ही रहा। आवाज बढ़ती गयी। जान पड़ता था कम्बख्त दरवाजा तोड़कर ही दम लेगा ! मैंने श्रीमतीजीसे कहा—'कह देना नहीं है।' श्रीमतीजीने दरवाजेके पास जाकर मीठी सी आवाजमें कहा—'नहीं हैं।'

उत्तर मिला—तार है। तारका नाम सुनते ही मैंने श्रीमतीजीको हटाकर दरवाजा खोल दिया, देखा तो मेरे पुराने दोस्त पड़ोसी लाला

साँकलचन्द खड़े हैं। सूरत देखते ही होश दुरुस्त हो गये। झेंपते हुए बोला—'अरे भई तुम थे?'

'हाँ हाँ, तभी तो मैंने कहा कुछ तार है। आज आप घर पर हैं—छुट्टी है क्या?'

'जी हाँ, साँकलचन्द भीतर आकर मेरे दिल-दिमागपर साँकल डालकर बैठ गये।

'कुछ पान-वान खिलाओ।'

'शहरमें हैजा फैला है इसलिए पानखाना हमलोगोंने बन्दकर दिया है।'

'अच्छा तो सिगरेट ही पिलाइये। वैसे तो सिगरेट आजकल अच्छा नहीं मिलता पर 'कैंचो' से ही काम चल जायगा। एक डिब्बी मँगवा लो।'

इस बेहयाईकी क्या दवा हो सकती है। साँकलचन्दने सिगरेट फूँकना शुरू किया। आधी डिबिया खतम हो चुकी तो मैंने कुछ सङ्केत करना शुरू किया। खूँटीपरसे तौलिया और आलमारीसे साबुनकी बट्टी निकाली। साँकलचन्द बोले—अभी नहाया नहीं क्या?

'नहीं, सोच रहा हूँ।'

'बरसातका मौसम है पानी खराब है—रोज-रोज नहानेसे न्यूमोनिया हो सकता है।'

'अच्छा, तो आपकी राय है तो मैं नहीं नहाऊँगा।'—मैंने झुँझलाकर तौलिया और साबुन रख दिया।

साँकलचन्द बातचीत जारी रखनेका प्रयत्न करते हुए बोले—

'आप तो अखबारके आदमी हैं इस 'ऐटम बम' का चाँदीके बाजार भावपर क्या असर होगा?'

'देखिये राष्ट्रपतिको मैंने चिट्ठी लिखी है, जवाब मिलने पर बताऊँगा।'

'अच्छा उधारपट्टा'....साँकलचन्द कुछ कहने जा रहे थे कि कमरेमें मिर्जा साहब दुबारा आ टपके। बोले—

'आपके पास चूहेदानी होगी?'....अरे साँकलचन्द बैठे हैं क्या—आदाबअर्ज है।....आजकल चूहोंने बड़ा परेशान कर रखा है। कल मेरी बेगमके सलवारका रेशमी इजारबन्द कम्बख्त बिलमें उठा ले गये।'

'साँकलचन्दके घरपर मैंने कई चूहेदानियाँ देखी थीं।' मैंने कहा—

'नहीं मिर्जा साहब आप जानते हैं मैं जैन हूँ, चूहे नहीं मारता।'

मैंने कहा—'साँकलचन्दजी, आपही तो कह रहे थे कि आपके पास एक गोली है जिसे खाकर आदमी स्वर्गका आनन्द लेने लगता है। दे न दीजिये मिर्जा साहब को। वे चूहोंको खिलायेंगे।'

'आप मजाक करते हैं, मेरे पास कोई गोली-वोली नहीं।'

'लीजिये यह गोली'—हाँफते हुए चौबेजीने चौखट पार किया। मैं दिल थामकर बैठ गया।

'अभी खिला दीजिये' चौबेजीने कहा। मैंने गोली लेकर मिर्जा साहबको दे दी। 'लीजिये मिर्जा साहब यह आपके कामकी चीज है।' 'घरमें सब ठीक हो गया'—चौबेजीने पूछा। मैंने कहा—हाँ।

'यह किस चीजकी गोली है चौबेजी'—मिर्जा साहब ने पूछा।

'प्लेग की'—मैंने जवाब दिया। चौबेजी मेरा मुँह ताकने लगे। 'आप चाहते हैं प्लेगकी गोली खाकर मेरे मकानमें चूहे मरें और प्लेग फैले'!

'मगर साँकलचन्दजी इसका प्रयोग कर चुके हैं'—मैंने कहा।

'जी नहीं मैंने तो....।'

'बात यह है कि साँकलचन्दजी जैन होकर चूहा कैसे मार सकते हैं पर मिर्जाजी आपको तो कोई एतराज नहीं।'

—मैंने साँकलचन्दकी बात काट कर कहा।

'एतराज क्यों नहीं मैं चूहे मारना चाहता हूँ और आप लोग आदमी मारना चाहते हैं।'

'आपको भ्रम हुआ है, मिर्जा साहब! मैंने तो आपके फायदेके लिए साँकलचन्दजीका अनुभव बता दिया था।'

'पर मैंने कभी....।' साँकलचन्दकी बात पूरी न हो सकी। चौबेजी बिगड़कर बोले—'आप लोगोंने क्या झगड़ा मचा रखा है। मेरे बाप-दादोंके हाथकी गोलीका अपमान करते हैं। मैंने इसे चूहोंके खिलानेके लिए दिया था कि आदमियोंके लिए।'

'अच्छा तो आपने आदमियोंके खानेके लिए दिया था क्यों'—मिर्जा साहब चौबेजीकी ओर गुस्सेकी नजरसे देखने लगे।

'तब क्या जानवरोंको खानेके लिए?' चौबेजी गरम हो उठे। मिर्जासाहब बात सुनते आग-बबूला हो रहे थे। चलिये मैं आपकी रिपोर्ट पुलिसमें करूँगा। आप चूहोंको मारनेवाली गोली आदमियोंको खिलाते हैं?''

'अजी चलो तुम्हारे बाप दादोंने भी कभी यह गोली खायी थी?'

'बाप-दादोंका नाम न लेना चौबे, नहीं तो तोंदका कचूमर निकाल दूँगा।'

'पहले पजामा तो अच्छी तरह बाँध लो मियाँ!'

'अजी बाहर आओ तो बतायें'—मिर्जाके पीछे चौबेजी कमरेके बाहर हो गये। साँकलचन्द पड़ोसियोंका झगड़ा चुकाने चले गये। मैं चुपचाप कमरेका दरवाजा बन्दकर तौलिया और साबुनकी बट्टी लेकर नहानेके कमरेकी ओर चला। बाहर शोर हो रहा था, जैसे कोई हिन्दू-मुस्लिम दङ्गा हो रहा हो।

पुरानी बीबियाँ बदलो



मेरे एक मित्र दूसरी शादी करने जा रहे हैं। पहली पत्नीसे आधे दर्जन बच्चे हैं। पर देहाती पत्नी और बच्चोंकी किचकिचसे ऊबकर आप एक षोडशी के साथ नयी दुनिया बसाने जा रहे हैं।

मुझसे सलाह लेने आये तो मैंने पूछा—

'पहली पत्नीका क्या होगा ?'

'उसे देहात भेज दूँगा।'

'मैंने तो समझा आप कहने जा रहे हैं किसी मित्रको भेंट कर दूँगा।'

'मजाक नहीं—मैंने उसका पूरा प्रबन्ध कर दिया है।'

'क्या पेंशन बाँध दी है ?"

'नहीं, गाँवकी सारी जमीन-जायदाद उसके नाम कर दी है ।'

'और बच्चोंका क्या होगा ?'

'सब उसके साथ रहेंगे !'

'और आप नये बच्चे पैदा करेंगे ?"

'जी !' और मेरे मित्रने बेहयाईकी हँसी हँसते हुए दाँत निपोर दिये।

मेरे मित्र जब देहातसे शहर आये तो घुटने तक धोती पहनते थे। धोती घुटनेसे एड़ीतक पहुँची। शहरकी हवा लगी, रङ्ग बदलता गया। धोतीकी जगह पतलूनने ली। जिवराखन तिवारीसे जे० तिवारी बने। साहबके जूतोंकी बदौलत सरकारी ठेकोंमें लाखों कमाये। पैसा आया, पर पैसेका सदुपयोग कैसे हो ? आकांक्षाओंने छलांग मारी। आध दर्जन 'कुत्तेके पिल्ले' (तिवारीजीके शब्दोंमें) और लम्बी नथवाली 'गतयौवना' पत्नी तिवारीजीके 'तरुण' हृदयका मनोरञ्जन नहीं कर पाती थी। इसलिए दूसरी पत्नीकी आवश्यकता हुई।

तिवारीजीने जब दूसरी शादीके महत्वपूर्ण मसलेपर मेरी बहुमूल्य सलाह माँगी तो मैंने कहा कि आपको पत्नी नहीं, प्रेयसीकी जरूरत है।

तिवारीजी बोले—'भाई, बिना पत्नी बनाये आजकल कोई लड़की प्रेयसी बननेका खतरा मोल नहीं लेती। फिर मेरे बालोंकी ओर देखो।'

बात सच थी ! तिवारीजी अनजानमें महँगा सौदा नहीं कर रहे थे। नयी पत्नीके हृदयपर कब्जा करनेके लिए उन्हें उसके पिताका दस हजारका कर्ज चुकाना पड़ा था।

शादी हो गयी। तिवारीजीकी नयी पत्नीका घूँघट हटा तो दस हजारकी रकम कम ही मालूम हुई। सौदा बुरा नहीं था। तिवारीजीका दिल बल्लियों उछल रहा था। पैर जमीनपर नहीं पड़ रहे थे। जमीनपर चाँद, घरमें स्वर्ग उतर आया था। 'वाहरे तिवारी—किस्मतके सिकन्दर निकले।' तिवारीजी गद्गद हो उठे।

'तुम्हारी पेंशनयाफ्ता बीबी कहाँ है ?'

'यार, तुम्हारी यह बेवक्त की शहनाई अच्छी नहीं लगती।'

'वाह! मियाँकी शादीमें बीबी और बापकी शादीमें बेटे नहीं दिखाई दे रहे हैं, यह भी कोई शादी है ?'

तिवारी बिना जवाब दिये ही चलते बने। तिवारीजीकी पहली पत्नी अपने बच्चोंके साथ देहात चली गयी और तिवारीजी नवपरिणीता-के साथ सुहागरात मनानेके लिए कश्मीर जानेकी तैयारी कर रहे थे।

मेरे मित्रोंमें दूसरी शादीका रोग बढ़ता जा रहा है। एक दर्जन मित्रोंमें आधे दर्जन रँडुए हैं जिन्हें यमराजकी अदालतसे ही तलाक मिल चुका है। बाकी आधे दर्जनमें एक तिवारीजीकी शादी हो गयी और चारका प्रेम चल रहा है। मित्रोंमें केवल एक मैं ही एक-पत्नी-व्रती हूँ।

विवाहित मित्रोंका यह अवैध व्यापार देखकर मैं शङ्कित हो उठता हूँ। डर है कि प्रेमके कीटाणु कहीं मेरे हृदय-प्रदेशको भी न खोखला कर बैठें। विवाहितोंमें बीवियाँ बदलनेका यह आन्दोलन इसी तरह बढ़ता रहा तो कुछ दिनोंमें तलाक दी गयी पत्नियोंके लिए प्रत्येक नगरमें एक 'परित्यक्तालय' का निर्माण करना पड़ेगा। तलाकके लिए अभी तो स्त्रियाँ प्रयत्नशील जान पड़ती हैं पर निकट भविष्यमें पासा पलटने जा रहा है। तलाककी स्त्रियोंको नहीं, पुरुषोंको आवश्यकता होगी।

मेरे मित्र प्रोफेसर टण्डनकी पहली बीबी ग्रेजुएट नहीं है, नाचना-गाना नहीं जानती, दावतोंमें नहीं जा सकती, मित्रके मित्रोंके साथ 'चाय चैट' नहीं कर सकती—तो प्रोफेसर टण्डनकी दूसरी शादी अन्याय-पूर्ण नहीं। प्रोफेसरको दावत और बालरूममें साथ ले जानेके लिए एक बीबी तो चाहिये ही। पहली पत्नीको भी वे तलाक नहीं दे रहे हैं। घरमें रहेगी—कामकाज देखेगी, बच्चोंकी देखभाल करेगी। मतलब यह कि आज प्रत्येक व्यक्तिको दो शादियाँ करनी चाहिये। एक पत्नी

शिक्षिता हो, नृत्य, संगीत, सिनेमा, दावत, सैर-सपाटे और मनोरञ्जनके लिए और दूसरी कुछ कम पढ़ी-लिखी, जो चूल्हा-चक्की, घरका काम-काज देख सके, बच्चे पैदा कर सके, बच्चोंकी देखभाल कर सके—और अल्पसन्तुष्टा हो।

मेरे दूसरे मित्र हैं डा० गर्ग। पुराने रङ्गुए हैं। एक नहीं तीन-तीन बार सुहागरात मना चुके हैं। अब चौथा प्रेम चल रहा है एक स्कूलकी मास्टरनीसे। प्रेमकी शीघ्र ही पूर्णाहुति होनेवाली है। मास्टरनी साहिबा शादीके पहले ही एक दर्जन बच्चोंकी माँ बननेसे हिचकिचा रही हैं पर डाक्टर साहबकी तिजोरी उन्हें आकृष्ट कर रही है। बीबियोंका अनुभव बतलाते हुए डा० गर्ग कहते हैं कि 'यार, बीबियाँ मारना एक कला है। कुछ लोग गला घोटकर मारते हैं, मैं प्रेम करके मारता हूँ।'

डा० गर्गका रहस्यवाद समझमें नहीं आता पर इतना बता सकता हूँ कि उनकी पिछली तीनों पत्नियाँ टी० बी० से मरीं। एकके मरनेका कारण दूसरी शादीका पूर्वारम्भ ही होता था। डा० गर्गके विवाहके प्रयोग चल रहे हैं। इस सम्बन्धमें वे एक पुस्तक भी लिखनेवाले हैं। डा० गर्गके लिए बीबियाँ और कपड़े बदलना एक मुहावरा बन गया है। अभी तो चारकी संख्या पार कर पाये हैं पर यही प्रगति रही तो गिनती दर्जनोंतक पहुँचेगी। डा० गर्गने विवाहका एक स्थायी निमन्त्रण कार्ड छपवा रखा है जिसमें पत्नीके नामकी खानापूरी भर करनी पड़ती है। इसीसे अनुमान कर सकते हैं कि डा० गर्ग अभी और कितनी बीबियाँ बदलेंगे।

बीबियाँ बदलनेका यह आन्दोलन मेरी मित्र-मण्डली तक ही सीमित नहीं, पूरे प्रान्त, समूचे देशमें फैला है। युक्तप्रान्तके एक भूतपूर्व मन्त्री एक पत्नीके रहते दूसरी स्त्रीको पत्नी बनानेका प्रयत्न कर सकते हैं, केन्द्रीय सरकारके एक मन्त्री पत्नीके मरनेके एक ही सप्ताह बाद दूसरी शादी कर सकते हैं, एक सेठ जब एक नयी मिल खोलते

हैं तो एक नयी शादी करते हैं—तो बीबियाँ बदलना एक फैशन समझना चाहिये। 'महाजनो येन गतः स पन्था।'

बीबियाँ बदलनेके आन्दोलनके सबसे बड़े समर्थक सेठ करोड़ीमल हैं। विभिन्न जातियोंकी पत्नियोंका घरमें संग्रहालय स्थापित कर भारतीय एकताका सुन्दर आदर्श उपस्थित कर रहे हैं। यदि यह संग्रहालय केवल अखिल भारतीय न रहकर अन्तरराष्ट्रीय बन सके तो अमेरिकन लेखक वेंडेल विल्कीका एक दुनियाका स्वप्न पूरा हो सकता है। राष्ट्र-संघ इससे एकता और शान्तिका सबक सीख सकता है।

हमारे मित्र कामरेड कुमारका कहना है कि पुरानी दुनिया बदलनेके पहले घरकी बीबियाँ बदलनी चाहिये। घर बदलकर ही दुनियाका नकशा बदला जा सकता है। पुरानी बीबियाँ पुराने युगकी, पुरानी व्यवस्थाकी यादगार हैं। उन्हें बदलकर ही हम नये युगकी नयी व्यवस्थाकी नींव दे सकते हैं। नयी व्यवस्थाके निर्माणमें नयी बीबियोंकी आवश्यकता है इसलिए युगकी पुकार है—पुरानी बीबियाँ बदलो।

अपने राम कामरेडसे तब तक सहमत नहीं होते जबतक अपनी श्रीमतीजीकी सलाह न ले लें। यदि श्रीमतीजी मान गयीं तो अपनेराम भी नयी व्यवस्थाकी स्थापनाके लिए घरकी मरम्मत कराके एक विवाह-विज्ञापन देनेका विचार कर रहे हैं।



जाड़ेमें सुबह उठना भी कयामतका सामना करना है। गरम-गरम बिस्तरसे नरम-नरम तकियेके सहारे गुलगुली रजाईको गलेसे लगाकर सोनेमें जो मजा है, जो आनन्द है वह अनुभूतिका विषय है, कलमका नहीं। मगर सबेरे ही सबेरे रौशनदानसे झाँकता हुआ सूरजका मनहूस चेहरा देखते ही साराका सारा मजा काफूर हो जाता है। बिस्तर छोड़नेकी कल्पनासे शरीर सिहर उठता है, दिल काँप उठता है, रोयें खड़े हो जाते हैं। कहाँ 'एयर कन्डीशन्ड'

रजाई और कहाँ लिहाफके बाहर बहती हुई बरफ, तीर-सी तेज हवा! हिमालयकी चोटीसे सीधे मेरे कमरेमें प्रवेश करती है। नौकर आकर खिड़की खोल देता है।

'उफ! कम्बख्त बन्द कर।'

बिला इजाजत हवा कमरेमें घुस आती है। सर आपसे आप रजाईके अन्दर चला जाता है। नौकरसे घड़ीका वक्त पूछिये, एक ही वक्त बतायेगा—दस बजे हैं।

तो अब उठना चाहिए—इस विचारसे जो करवट बदलता हूँ तो रजाईके शीतल भागका स्पर्श हो जाता है। ऐसा लगता है जैसे किसीने गरम पानीसे निकालकर ठण्डे पानीमें छोड़ दिया है। दरवाजेके बाहर खड़ी ठण्डी हवाका स्मरण आते ही उठनेके विचारको पाला मार जाता है। दिमागको कल्पनाओंकी गरमीसे सेंकता हूँ।

आप कहते हैं—सूरजके साथ उठना चाहिए। मैं पूछता हूँ, क्यों? क्या हमें भी सूरजकी तरह कोई नौकरी बजानी है, नगरोंमें रोशनी करनी है, सड़कोंपर झाड़ू देना है, गलियोंमें अल्लाहके नामकी फेरी लगानी है? मैं क्यों उठूँ? सुबहका सुनहला वक्त भी क्या उठकर खोने को है? सुबहके समय आरामदेह रजाईके बीच चुपचाप पड़े रहनेसे अधिक महत्वपूर्ण मनोरञ्जक एवं आवश्यक भी कोई काम हो सकता है?

आप कहते हैं—स्वास्थ्य के लिए!

सबेरे-सबेरे यह बात मस्तिष्कमें घुस ही नहीं पाती कि सबेरे उठने और स्वास्थ्यसे क्या सम्बन्ध है! अगर मान लीजिये कुछ है भी तो बुरा ही हो सकता है। सबेरे उठनेसे ठण्डी हवासे सामना होगा ही, कहीं हवासे निकलकर ठण्ड लग गयी, सर्दी हो गयी और ईश्वर न करे मामला आगे बढ़े—सर्दी, जुखाम हो, जुखाम खाँसीका रूप बदले, खाँसी बढ़कर टी० बी० में परिवर्तित हो जाय....! या बाहरकी खुली

हवा लगते ही न्यूमोनिया, डबल न्यूमोनिया हो जाय तो अब आपही बताइये सुबह-सुबह कौन अपनी कम्बख्ती मोल ले ? मुझे बिस्तरपर अस्वस्थ ही रहना पसन्द है; पर न्यूमोनिया और टी० बी० का उपहार नहीं चाहिए। मुझे ऐसा स्वास्थ्य नहीं चाहिये जो सबेरे ही उठकर जङ्गल और झाड़ियोंकी खाक छानने को कहे, सुनसान मैदानों और एकान्त बग़ीचोंमें घूमनेकी सलाह दे। इस पागलपनके लिए सुबह न बिस्तर ही छोड़ सकता हूँ न स्वास्थ्यके लिए पागल ही बन सकता हूँ।

जाड़ेमें अगर कोई न उठाये तो दोपहरके पहले क्या उठा जाय ? पर कम्बख्त नौकर, फकीरों और इन बेवरके दोस्तोंके मारे तो आफत है, ये दुनियामें किसीका चैनसे सोना नहीं देख सकते।

सबेरे ही सबेरे चलता है एक फकीर। इसे पैसेकी जगह गालियाँ देनेका जी करता है। गलीमें गाता हुआ आयेगा और ठीक मेरी खिड़कीके नीचे खड़ा होकर मुर्गेकी तरह बाँग लगायेगा—'जाग, सोने-वाले जाग।' बुद्धू कहीं का—इसे इतनी अक्ल नहीं कि यह भी कोई भीख माँगनेका समय है। कौन ऐसा बेवकूफ है जो रजाईसे बाहर निकलकर इसे पैसा देगा ? फिर भी कम्बख्त रोज आकर जगाता है। मैं तो खैर सीधा आदमी हूँ, रजाईके भीतर ही झुंझलाकर रह जाता हूँ; पर यदि किसी बदमिजाजसे पाला पड़ा तो जाड़ेमें रोज सुबह जगानेका मजा मिल जायगा। सोचता हूँ किसी दिन उठकर इसे अक्ल दूँ कि भीख माँगना ही है तो दिन-दोपहर, शाम किसी वक्त आ, पर ईश्वरके लिये सुबह-सुबह मेरी निर्दोष नींदकी हत्या न किया कर और यह भी बता दूँ कि भीख माँगनेके लिये भी दिमाग चाहिये। पर यह काम रोज आगामी कलके लिये टाल दिया करता हूँ।

जाड़ेमें सुबह-सबेरे अगर कोई आफतका मारा आपके दरवाजेपर आपका नाम लेकर पुकारे तो आपको कैसा अनुभव होगा ? पर

दुनियामें कुछ ऐसे बेवकूफ भी अस्तित्व रखते हैं जो ठीक सबेरे किसी भले आदमीके घर जा धमकते हैं। इन्हें सभ्यताके 'पेनलकोड'की महत्वपूर्ण दफाका पता नहीं कि सुबहका वक्त किसी शरीफ आदमीसे मिलने जाने का नहीं। मेरे आधेसे अधिक बेखरके बेवकूफ दोस्त मुझसे सुबह ही मिलने आते हैं। अब इन पढ़े-लिखे बुद्धुओंको सभ्यताका पहला पाठ कैसे पढ़ाऊँ! अरे बाबा अगर तुम्हें नींद नहीं आती तो किसी डाक्टरसे सलाह क्यों नहीं लेते? नींद न आना एक बहुत खतरनाक बीमारी है—'इनसोमिया'। स्वास्थ्यके लिए सोना कितना आवश्यक है! पर ये अक्लके दुश्मन क्यों मानने लगे मेरी बात?

नींद स्वास्थ्यकी सुराही है। ब्रांडी ह्विस्कीसे कहीं अधिक मादकता और तेजी नींदकी एक झपकीमें होती है। सबेरेकी नींदकी झपकीमें वास्तविक नींदका मजा आता है। सबेरेकी एक झपकीके लिए मैं बड़ीसे बड़ी कीमत चुकानेको तैयार हूँ। एक ओर आई० सी० एस० की नौकरी दूसरी ओर सुबहकी मीठी झपकी हो तो मैं नौकरीपर लात मारकर सोना पसन्द करूँगा। मैं क्या सभी समझदार आदमी ऐसा ही करेंगे।

सुबहके सपने कितने मीठे होते हैं! और सुना है सच भी होते हैं; इसलिये और भी सुबहकी झपकी मैं कभी नहीं छोड़ता। न सोऊँ तो शायद मेरा कोई सपना सच होते-होते रह जाय।

सुबहका ऐसा सुहावना वक्त जब कि गुलगुले गद्दे और गरम रजाईकी गोदमें पड़े मीठी नींद लेनेके सिवा और किसी दूसरे कामकी कल्पना भी नहीं की जा सकती, कुछ बुद्धू विद्यार्थी किताबोंकी काली लकीरोंपर पुतलियोंकी रेलगाड़ी बेतहाशा दौड़ाते हैं। दिमाग आँखोंसे असहयोग कर देता है, पलकें पुतलियोंसे खुली रहनेसे इनकार कर देती हैं, गरदन बार-बार झुककर बख्श देनेकी प्रार्थना करता है।

इसपर भी यदि वह अड़ियल टट्टूका स्वभाव प्रदर्शित करता है तो दिमाग चुपचाप सोता है, अकेली आँखें किताबकी सूनी गोदमें कवायद करती हैं। इसलिये मेरी सलाह तो है कि विद्यार्थी वर्ग सुबह-सुबह चिल्लाना मुर्गोंके लिए छोड़कर मजेकी नींद सोया करे—इससे सरका दर्द, आँखोंकी कमजोरी, दिमागका गोबर तीनों दूर हो जायेंगे।

सुबह उठकर कुछ लोग टहलने जाते हैं। मेरा तो खयाल है ऐसे लोग तेलियोंके लिये बड़े कामकी चीज हैं। जाड़ा हो या बरसात, सुबह हो या शाम, ये चलनेसे कभी थकते ही नहीं। देशमें ऐसे लोगोंकी काफी बड़ी तायदाद है इसलिये बैलोंके मुकाबलेमें ये बहुत सस्ते पड़ेंगे। तेलका कारबार फायदेमें चलेगा और ग्रामोद्योग आन्दोलनको काफी सहायता मिलेगी।

जाड़ेमें सुबह उठना मुश्किल काम है पर दाढ़ी बनाना तो एक बहुत बड़ी मुसीबतका सामना करना है। मेरी समझमें नहीं आता कि इस नित नूतन हरियालीकी जरूरत क्या थी। दाढ़ी मर्दोंकी कम्बख्ती है, आफत है, मुसीबत है, सजा है और है अभिशाप। इस बेजरूरतकी चीजसे देशकी कितनी शक्तिका अपव्यय होता है, कितना रुपया व्यय होता है कितना समय खर्च होता है। हिटलरसे लेकर सिकन्दर हयात तक, महात्मा गाँधीसे लेकर नेहरू तक हरेकको अपनी दाढ़ीकी सफाईके लिए अपने कीमती वक्तकी कुरबानी करनी पड़ती है। फिर मैं ही क्यों अफसोस करूँ। लेकिन इससे पता चलता है कि संसारके सभी देशोंके बुद्धिमान कवि विचारक एवं फिलासफर दाढ़ी रखना क्यों पसन्द करते थे।

जाड़ेमें दाढ़ी बनाना आफत ही है। कम्बख्त नाई कसाईसे कम नहीं होते। प्यार मुहब्बतसे सहलाई दाढ़ीको गवर्नमेन्टका फार्म समझ कर कटाई शुरू कर देते हैं। इसलिये मैं अपनी दाढ़ी आपही बनानेमें बुद्धिमत्ता समझता हूँ।

जाड़ेमें गरम पानी ठंढा कितनी जल्द होता है यह आप नहीं जानते होंगे। गरम पानी मँगाकर एक झपकी ले लीजिये और देखिये कि पानीकी सारी गर्मी भाप बनकर उड़ जाती है और शेष रहती है बरफकी शीतलता। फिर दाढ़ी बनाना जरूरी ही हुआ तो मेज पर रखे गरम चायका प्रयोग किया जा सकता है। मगर सुबह-सुबह चाय भी तो जरूरी है। प्याली खाली कर देने पर दाढ़ीकी समस्या नग्न रूपमें सामने आ खड़ी होती है। लाचारी खिड़कीमें आती हुई धूपमें बरफके पानीको सेंककर जो कपोलोंको स्पर्श करता हूँ तो एक झनकार-सी पैदा होती है। दाढ़ीके बाल सिविकगार्डकी सतर्कतासे खड़े हो जाते हैं। दूसरी कोटिंगके बाद ऐसा लगने लगता है कि चेहरे पर मलाईकी बरफ जमाई जा रही है। फिर साहस नहीं होता कि जलयुक्त साबुनकी तीसरी कोटिंग की जाय। फल स्वरूप गालोंकी हालत पर तरस खाकर दाढ़ीको एक दिनकी और मुहलत मिल जाती है। तौलियासे चेहरेको रगड़ कर एक बार फिर रजाईके अन्दर पाँव सीधा कर लेता हूँ। एक तीसरी मुसीबत भी सामने खड़ी है। आज एतवार है। इत्मिनानका दिन तो है पर साथ ही जाड़ेमें मेरे नहानेका दिन भी है। नहानेकी कल्पनासे मेरा सारा शरीर रोमाञ्चित हो उठता है जैसे भारतके हाथसे निकलनेके खयालसे ब्रिटेन।

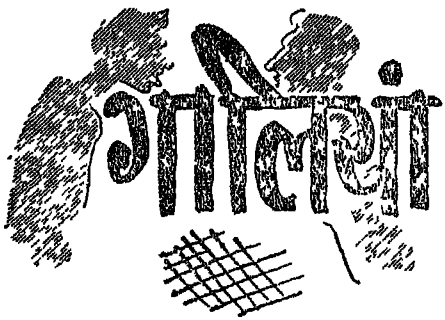
नहानेका पानी गरम होकर ठंडा भी हो जाता है, मगर बिस्तर छोड़नेका जी नहीं करता। उठते-उठते रजाईसे लिपट कर रोनेका जी करता है। नहाना कोई जरूरी तो है नहीं, भोजनके पहले हाथ मुँह धो लेनेसे ही बस काम चल जायगा। तो अभी बिस्तर छोड़नेके बिचारको थोड़ी देरके लिए ताक पर रख दूँ।

देखिये कम्बख्त देवता भी कितने स्वार्थी हैं, खुद अपने सोनेके लिए छः महीनेकी रात बना रखी है, हमारे लिए जाड़ेके तीन महीनेकी ही रात बना देते तो क्या बुरा था? कमसे कम इस

नहानेकी मुसीबतसे तो मुक्ति मिलती और दाढ़ीकी बलासे तो छुटकारा मिलता।

सुना है जाड़के दिनोंमें साधारण बिस्तरेमें भी चार चाँद लग जाते हैं यदि साथ सोने वाला कोई सुन्दर साथी हो। आपके दुर्भाग्यसे मुझे यह सौभाग्य प्राप्त नहीं, इसलिए आप मेरी कुछ मनोरञ्जक अनुभूतियोंसे वञ्चित रह जायँगे।

जाड़ेकी सुबह—लेकिन सुनिये तो! १२ बज रहे हैं, मेरे उठनेका समय हो गया है। तो इजाज़त है....?



गालियाँ कई प्रकारकी होती हैं। गुस्सेकी गालियाँ, प्यार भरी गालियाँ, घरेलू गालियाँ, बाजारू गालियाँ, सब्जी बाजारकी गालियाँ, इक्के-ताँगेवालोंकी गालियाँ, स्कूल-कालेजकी गालियाँ, दफ्तरके बाबुओंकी गालियाँ। अलग-अलग शहरोंकी प्रांतोंकी अलग-अलग गालियाँ होती हैं। वर्गभेद, प्रान्तभेद, भाषा-भेदसे गालियोंका बाह्यरूप ही बदल जाता है—आत्मा एक ही होती है। गालियोंके अध्ययनके लिए कश्मीर-से कुमारीतक और पश्चिमी पाकिस्तानसे

पूर्वी पाकिस्तानतक भारत प्रदक्षिणा करनेपर मैंने उपर्युक्त निष्कर्ष निकाला है। बम्बईका मस्का प्रयोग, काशीका नवनीत प्रयोग और लखनऊ, दिल्ली सेक्रेटेरियटका पालसन प्रयोग सब एक ही वैज्ञानिक सत्यकी पुष्टिमात्र करते हैं। पृथ्वीके व्यवहारकुशल महापंडितोंके श्रीमुखसे समय-समयपर जो उक्तियाँ निकलती हैं—उन्हें असभ्य और असंस्कृत लोग 'गाली' की संज्ञा देते हैं। सच पूछिये तो गालियाँ बड़े-बूढ़ोंके आशीर्वाद हैं। बड़े-बूढ़ोंके अनुभवसे लाभ न उठाकर यदि हम उनका तिरस्कार कर बैठें तो भावी इतिहासकारों द्वारा अहमक गिने जायँगे। इसी बुद्धिमत्ताके कारण गालियाँ परम्परागत ज्ञानका प्रतीक, पिछली पीढ़ियोंके अनुभवोंका संचित कोष बन गयी हैं। यदि हम इस ज्ञानकोष-से लाभ न उठायें तो हम मूर्ख हैं।

बड़े-बड़े भाषाशास्त्रियोंका कहना है कि गालियोंसे भाषाके निर्माणमें बड़ी सहायता मिली है। गालियोंसे भाषाका संस्कार एवं परिष्कृत हुआ है। सच पूछिये तो मुहावरोंका प्रयोग सर्वप्रथम गालियोंसे प्रारम्भ हुआ। गालियोंकी चुस्त मुहावरेदार भाषा और उक्तियाँ बड़े-बड़े लेखकों के लिए आदर्श बन गयीं। साहित्यकारोंने गालियाँ न देकर भी गालियों से बहुत कुछ लिया है।

गालियोंका इतिहास उतना ही पुराना है जितना कामशास्त्र। गालियोंका जन्म कब हुआ, कैसे हुआ यह खोजका विषय है। भारत में गालियोंके प्रेमी कम हैं। अधिकतर रिसर्चप्रेमी पुरानी पुस्तकोंकी धूल झाड़ना, गड़े मुर्दे उखाड़ना पसन्द करते हैं। गालियोंकी सजीव साहित्यिक परम्पराका मनोवैज्ञानिक विश्लेषण भला फिर कौन करे। यदि स्वतन्त्र भारतमें किसी गालीप्रेमी नागरिकका स्वतन्त्र मस्तक गालियोंपर खोज करनेको सन्नद्ध हो तो उसे डाक्टरेटके लिए अपना निबन्ध आक्सफोर्ड या कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय भेजना चाहिये। हिन्दुस्तान में गालियोंके विशेषज्ञों और विद्वानोंकी कमी है—न भारतीय अभी

गालियोंके महत्वको ही समझ पाये हैं। अंग्रेज गालियोंको बुरा नहीं मानते—बल्कि इनका आदर करते हैं।

गोरखपुरमें एक अँग्रेज आई० सी० एस० था। उसे भारतीय गालियोंसे बड़ा प्रेम था। उसने गालियोंका एक कोश बना डाला था। इनमेंसे कुछ चुनी हुई गालियाँ उसने अपने दैनिक व्यवहारके लिए डायरीमें नोट कर ली थी। दफ़्तरमें देशी बाबुओंको जब कभी गालियाँ देनी हों तो वह अपनी डायरी उलटकर आधी दर्जन नयी गालियाँ चुन लेता था। दफ्तरके बाबू इस मौलिकताके कायल थे। पर भारतीय मनोवृत्ति तो देखिये। 'लीडर' के सम्पादक श्री सी० वाई० चिन्तामणि मिनिस्टर बने तो बेचारे आई० सी० एस० को विवश होकर अतीव परिश्रमसे तैयार किये हुए अपने गालीसंग्रह कोशकी होलिका जलानी पड़ी।

अलीगढ़ विश्वविद्यालयके एक गालीप्रेमी प्रोफेसरका भी पता चला है। नाम आपका गुमनाम ही रहने दीजिये। गालियोंका बेहद शौक है आपको—देनेका नहीं, सुननेका, संग्रह करनेका। अपनी नोटबुक लेकर आप किसी ताँगेपर बैठकर शहरके बाहर निकल जाते हैं और वहाँ आप ताँगेवालेसे पूछते हैं कि तुम्हें कोई यह गाली दे तो तुम क्या जवाब दोगे। ताँगावाला जो जवाब देता है वह नोट कर लिया जाता है। यदि दुर्भाग्यसे वह प्रोफेसरकी डायरीमें पहलेसे मौजूद रहा तो वे कहते हैं—'नहीं यार, यह नहीं जमी, कोई दूसरी सुनाओ।'

'ताँगेवाला गालियाँ सुनाता है और उसे फी मौलिक गाली एक दुअन्नी इनाम मिलती है। ताँगेवाला दूने उत्साहसे गालियाँ सुनाता है, नयी गालियाँ ईजाद भी करता चलता है।

प्रोफेसर साहब अब बूढ़े हो चले हैं। उनका संग्रह काफी बड़ा हो गया होगा। पर अभीतक प्रकाश में नहीं आया। भारत स्वतन्त्र हो गया पर अभी यहाँके प्रकाशक प्रेम-रोमांसके उपन्यास और कहानी-

संग्रह ही प्रकाशित करना जानते हैं और बेचारे प्रोफेसरका विशाल गालीकोश अप्रकाशित पड़ा है।

गालियोंके हजारों फायदे हैं जो अभी लोगोंको मालूम नहीं हैं। गालियोंका सर्वोत्तम उपयोग मनोरञ्जनके लिए किया जा सकता है। गालियोंसे दिमागी थकावट दूर होती है, हृदयमें रक्तसंचार होता है, मस्तिष्कको सोचनेकी प्रेरणा मिलती है।

यदि आपको इसकी सत्यताकी परीक्षा लेनी हो तो सीधे सब्जी बाजार चले जाइये। वहाँ किसी प्रौढ़ा कुँजड़िनको 'बुढ़िया' का सम्बोधन कर पालकका भाव दरयाफ्त करिये तो आपको नुस्खेका असर तुरत ज्ञात हो जायगा। वास्तवमें यह रईसी नुस्खा है। लखनऊके पुराने नवाबोंका तो यह प्रिय मनोरञ्जन रहा है। उन्हें कुँजड़िनोंका वाग्युद्ध देखने और गालियाँ सुननेका बड़ा शौक था। किसी भी सब्जी बाजारमें दो पड़ोसी कुँजड़िनोंको लड़ाकर आप विशुद्ध साहित्यिक गालियोंका आनन्द ले सकते हैं। लखनऊकी कुजड़िनें और काशीकी खटकिनें वाग्युद्धमें विशेष प्रसिद्धि प्राप्त कर चुकी हैं। आगरा की धाबिनोंके बारेमें भी कुछ ऐसा ही सुन रखा है पर पालीवालजीके नगरके बारेमें हमें विशेष जानकारी नहीं है।

गाली प्रतियोगितामें कुँजड़िनोंके बाद स्कूल कालेजके होस्टलोंमें रहनेवाले छात्रोंका नम्बर आता है। युनिवर्सिटी होस्टलोंमें जब गाली प्रतियोगिताका आयोजन होता है तो बिजलीका मेन आफ कर दिया जाता है और वाग्युद्ध प्रारम्भ हो जाता है। एक ब्लाकके छात्र दूसरेको ललकारते हैं और दोनों दल कामविज्ञान और भाषा विज्ञानकी मौलिक खोजोंको गालियोंके रूपमें प्रस्तुत करते हैं। आधे घंटे गला साफ करनेके पश्चात् बिजली जला दी जाती है और छात्र अपने-अपने कमरेमें अध्ययनके लिए घुस जाते हैं। यह परीक्षा कालका सर्वोत्तम मनोरञ्जन होता है।

बनारसके कुछ गालीप्रेमी रसिक छात्र पढ़ने विलायत गये। वहाँ का शिष्ट सामाजिक जीवन उन्हें पसन्द नहीं आया। कहाँ बनारसमें बहरी अलँग यार दोस्तोंके साथ भङ्ग छानते थे, दिल खोलकर हँसते थे, गाली-गलौज करते थे और कहाँ लन्दनके 'थैंक्यू' और 'आई एम सारी' के तकल्लुफमें जकड़ गये। ऊबकर एक दिन बनारसी रसिक पिकनिकके बहाने लन्दनके बाहर निकल गये और वहाँ आधे घण्टेतक जङ्गलके एकान्तमें दिल खोलकर एक दूसरेको गालियाँ दीं तब जाकर उनका जी हलका हुआ। लौटते समय उनका दिल दिमाग स्वस्थ था।

खुले दिलसे जो गाली नहीं दे सकता उसे मरीज समझना चाहिये। दिल खोलकर हँसना, गालियाँ देना अच्छे स्वास्थ्यपूर्ण पौरुषका चिह्न है। जो गाली नहीं दे सकता उसके पुरुष होनेमें सन्देह है। गालियाँ मस्तिष्कका विकार दूर करती हैं, हृदयको स्वच्छ करती हैं, रक्तसंचार तीव्र करती हैं।

पुलिस, अफसर, वकील गालियोंके विशेष प्रेमी होते हैं। उन्हें गालियाँ कण्ठस्थ होती हैं। गालियोंका कोश इनकी जिह्वापर होता है। दफ्तरके बाबू दबी जबानसे गाली देते हैं। पुलिसवाले तो गालियों की रोटी खाते हैं। इक्के-ताँवालोंकी गालियाँ चाबुक-सी तेज होती हैं और प्रायः घोड़ी और उसकी तीन पुश्तोंसे सम्बन्धित होती हैं।

गालियोंमें भी मौलिकता और प्रतिभाकी आवश्यकता होती है उल्लू, गधा, सूअरकी उपाधि और बेवकूफ, नालायक, बदतमीजके विशेषण गाली नहीं। बछियाके ताऊ, तेलीके बैल, गोबर गनेस आदमी या पाजामा, डारविनकी औलाद, घोड़ीकी लीद, औरतके जात शिष्ट गालियाँ कही जा सकती हैं। पर विशुद्ध गालियाँ लिखनेकी चीज नहीं सुननेसे ताल्लुक रखती हैं।

कुछ सर्वप्रिय रिश्ते भी गालियोंमें सम्मिलित हो गये हैं जैसे साला साली, ससुर प्रत्येक व्यक्तिको किसी न किसीका साला बनना ही पड़ता

है इसलिये सालाकी गाली कोशसे निकाल फेंकनी चाहिये वास्तवमें गाली विशेषज्ञोने 'साला कहींका', 'ससुरा कहींका', जैसी गालियोंका निर्माणकर ससुरालवालोंके साथ बहुत बड़ा अन्याय किया है इसे कोई भी ससुराल प्रेमी क्षमा नहीं कर सकता। इससे एक बातका पता तो चलता है कि गालीके निर्माता अवश्य अविवाहित रहे होंगे अन्यथा इन प्यार भरे रिश्तोंको गालियोमें सम्मिलित न करते। ससुराल जहाँकी गालियाँ भी प्यारी लगती हैं और जिसे सुननेके लिये शादीमें रुपये देकर फीस चुकानी पड़ती है—वहाँके लोगोंको उलटकर गालियाँ देना आर्यसभ्यता और भारतीय संस्कृतिके विरुद्ध हैं। ये गालियाँ अवश्य अनार्य सूत्रोसे आकर मिल गयी होंगी।

गाली एक अमोघ अस्त्र है। युद्ध-संघर्षमें इसका खुलकर प्रयोग होता है। झगड़े प्रायः गालियोंसे ही प्रारम्भ होते हैं और गालियोंसे ही समाप्त होते हैं। अहिंसक युद्धमें गालियोंके अस्त्रका प्रयोग क्षम्य है। बङ्गाली भाई यह अहिंसक लड़ाई ही लड़ते हैं। कुंजड़िनोंकी लड़ाई तो आल इण्डिया रेडियोके रेकर्ड करनेकी चीज है। औरतके मुखसे गालियाँ बुरी नहीं लगतीं पर द्रौपदीकी एक व्यंग्य भरी गालीपर महाभारतका युद्ध हुआ था।

गालियोंका प्रयोग केवल मनोविनोद के लिए किया जाना चाहिये तभी गालीकी सार्थकता है। यदि गालियोंको कार्यरूपमें परिणत करनेकी बेवकूफी दिखायी गयी तो फिर एक-एक गालीपर एक-एक महाभारत खड़ा हो सकता है। इसलिये खैरियत इसीमें है कि गालीको गालीसे खतम कर दिया जाय।

राजनीतिमें गालीका विशेष महत्व है। चुनावमें जो गाली-प्रयोगमें अधिक निपुण होता है वही विजयी होता है। जनसभाओंमें गालियोंका प्रयोग खुलकर होता है। बोर्डोंके सदस्य जब गालियोंका आनन्द नहीं ले पाते तो जूते-चप्पलपर उतर आते हैं।

इस मामलेमें कांग्रेसजनोंका आचरण सराहनीय है। वे कांग्रेसकी बैठकोंमें केवल 'अहिंसक युद्ध' करते हैं। कांग्रेसी केवल राजकीय गालियोंका व्यवहार करते हैं। समाजवादी अशुद्ध और कम्युनिस्ट फूहड़ गालियोंका प्रयोग करते हैं। ग्रामीण कांग्रेसजनोंकी गालियोंका भी असेम्बलीके अध्यक्षों द्वारा संस्कार किया जा रहा है। भारतीय संसदकी ओरसे शिष्ट गालियोंके संग्रहका भार एक समिति को सौंपा गया है जिसके अध्यक्ष डाक्टर रघुवीर हैं।

आजकल जनसेवक गालियोंके इतने अभ्यस्त हो गये हैं कि बिना गालीके उनका काम भी नहीं चल सकता। कांग्रेसजनोंपर पहले फूलों-की वर्षा होती थी, जयजयकार होती थी, आजकल गालियोंकी बौछार होती है। पर गद्देदार कुर्सीका आनन्द अनुभव करनेके बाद अब गालियाँ बुरी नहीं लगतीं। गाली देनेवालोंमें सबसे निपुण अखबार-वाले हैं। इनकी गालियाँ नहीं बन्दूककी गोलियाँ होती है। भगवान ही बचाये इनसे।

गालियोंका सदुपयोग भी कुछ लोग करते हैं। जैसे रिक्शेवालेको पैसा कम देना हो दो-चार गालियाँ दे दीजिये, होटलका बिल न चुकाना हो तो दो-चार प्लेट तोड़कर बेयराको गाली दे दीजिये, नौकर पिछला वेतन माँगता हो गाली देकर निकाल बाहर कर दीजिये, बिना टिकट सफर कर रहे हों टिकट कलक्टरके टिकट माँगनेपर गाली देकर उसे दरवाजेके बाहर कर दीजिये। गालियोंसे तात्कालिक लाभ तो अवश्य होगा पर कहीं बादमें पुलिसकी गालियोंका सामना हुआ तो मुश्किल होगा क्योंकि गाली प्रतियोगितामें कोई पुलिसको नहीं पा सकता।

शिष्ट गालीका नमूना देखना हो तो आपको घरके अन्दर ही मिल जायगा। श्रीमतीजीको छेड़कर देखिये। 'जाइये आप बड़े वैसे हैं।' इससे ज्यादा कड़वी गाली आपको सुननेको नहीं मिलेगी। आप मीठी

गालियोंके लिए तरसते ही रह जायँगे। पर कुछ भाग्यवान पति 'दाढ़ी-जार' और 'निकम्मा' के प्रिय संबोधन पानेमें सफल हो जाते हैं। कुछ भी हो, बाजारू मिठाईसे घर की गाली हर हालतमें अच्छी ही होती है।

स्त्रीको गालीके जवाबमें गाली नहीं देनी चाहिये क्योंकि वास्तवमें सभी गालियोंका वार अन्तमें नारी ही सहती है। यदि महान गाली-विशेषज्ञ फ्रायड भारतमें आकर भारतीय गालियोंका अध्ययन करता तो उसके विचार अधिक सुलझे होते, सिद्धान्त अधिक पूर्ण होते। सम्भव हो किसी भारतीयके मुखसे गालियाँ सुनकर ही फ्रायडने अपनी पुस्तकें रची हों। कुछ भी हो, विदेशी पण्डित गालियोंका अध्ययन करनेके लिए भारत आयें, लखनऊ और काशीकी गलियोंकी सैर करें तभी उनका मनोविज्ञानका अध्ययन पूर्ण हो सकता है। भारतीय गालियोंसे उनके विचारोंका संस्कार और ज्ञानकी वृद्धि हो सकती है।



मैं स्वयं अविवाहित हूँ। बीवियों-सम्बन्धी मेरी सारी बातें और अनुभव मेरे दोस्तोंकी पत्नियों तक सीमित हैं। अगर मैं विवाहित होता और अपने अनुभव लिखता तो केवल एक ही पत्नीका लिख पाता, पत्नियोंका नहीं। अविवाहित होनेके नाते अपने लेखमें मित्रोंकी पत्नियोंको स्पर्श करनेका मुझे विशेषाधिकार है—आप भले ही इसे मेरी अनधिकार चेष्टा समझें।

सच तो यह है कि बीवियाँ अपने पतिके दोस्तोंको अपना दुश्मन समझती

हैं और हम दोस्तोंकी बीबियोंको अपना रकीब। एक तरफसे बीबी खींचती हैं, दूसरी ओरसे दोस्त। ऐसी रस्साकशीके बीच जो पड़ता है उसीका जी जानता है। खैर दोस्तोंको तो किसी तरह नाराज किया और मनाया जा सकता है मगर ये बीबियाँ—बस भगवान बचाये!

कहनेको आप भले ही इन्हें अबला कह लें। कुछ लोग सबला भी ठीक ही कहते हैं। पर मैं तो इन्हें बला कहता हूँ। वास्तवमें बीबियाँ एक बला हैं। इस बलासे छुटकारा या मुक्ति पानेके लिए कुछ लोग तलाक दे बैठते हैं पर यह गलत तरीका है। जिन्हें बीबीका एक बार भी चस्का लगा वह बिना बीबीके नहीं रह सकते। तलाक देनेपर भी दूसरी बीबी कहींसे छत फाड़कर आ टपकती है। मतलब यह कि बीबियोंसे पीछा छुड़ाना बड़ा मुश्किल है।

बीबियोंके बारेमें सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि वे डिक्टेटरशिप पसन्द करती हैं। मैंने एक बार एक मित्रकी पत्नीसे कहा कि अगर सरकारको यह बात सुझाई जाय कि हमारे पड़ोसके घरोंमें भी हिटलर मुसोलिनी भरे पड़े हैं तो आप लोग डी० आई० आर० में आ सकती हैं। मित्र पत्नीने हँसकर कहा—आपको मालूम है। कहीं सरकारपर सरकारका हुक्म चलता है। मैं चुप रह गया।

बीबियाँ इतनी झगड़ा-पसन्द होती हैं कि इनसे लड़ा भी नहीं जा सकता। और न बुजदिल पतियोंको साहस ही होता है। वास्तवमें पति-देवता भी नीमकी छाँहमें मजेसे मीठी नींद सोते हैं। कौन जाय फिजूलकी बहस करने। बीबियाँ बहस जरा कम पसन्द करती हैं। उनके एकतन्त्र शासनपर तनिक भी आघात पहुँचा कि वे बरस पड़ीं। बीबियोंके एकाधिकारपर आपत्ति करना विपत्ति मोल लेना है। घरेलू सरकार यह विद्रोह नहीं बर्दाश्त कर सकती। वह तो पतियोंका पूर्ण आत्मसमर्पण चाहती है। इस निरङ्कुश शासनके आदी पतियोंको भी इस गुलामीमें मजा आने लगा है। आप हजार भाषण करें पर इन

बेवकूफ बीबीवालोंपर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। आपकी बातें बीबियोंकी बातोंसे भरे हुए कानोंकी दीवारोंसे टकराकर वापस चली आयँगी। ऐसी शक्तिशाली हैं ये बीबियाँ।

बीबियाँ बाज-बाज बड़ी भावुक होती है। मेरे एक दोस्तकी बीबीका दिल बहुत नाजुक है। जरा जरा-सी बातपर उन्हें ठेस लगती है और बात-बातपर वह रो देती हैं। और एक मेरे मित्र हैं कि पत्नीकी आँखोंमें आँसू देखते ही चाँदीकी कटोरी लिए तैयार रहते हैं। श्रीमतीजी कवियित्री हैं इसलिए उनकी आँसुओंकी कीमत बहुत अच्छी तरह समझते हैं।

बीबियाँ कई तरहकी होती हैं! कुछ तो गाँधीजीकी भेड़ बकरियोंकी तरह अहिंसक होती हैं। इनके घरकी शान्ति बनी रहती है। पर जिन्नाके नक्षत्रमें पैदा कुछ बीबियाँ ऐसी भी होती हैं जो बेलन अस्त्रका प्रयोग जानती हैं। ऐसी बीबियाँ ऐटम बमकी तरह खतरनाक विस्फोटक एवं घातक होती हैं।

हमारे एक अभागे मित्रकी बीबी बहुत कुछ ऐटम बमसे मिलती जुलती हैं। एक दिन मित्रको आदेश मिला—आज छुट्टी है। फालतू बैठे हो सट्टीसे कुछ साग-सब्जी ही खरीद लाओ।'

मित्र महोदय झोला लेकर निकले। राहमें कुछ दोस्त मिल गये। गपशपमें सट्टीकी सुध उतर गयी। भूख लगनेपर जब घरकी याद आयी तो पासकी दुकानसे जो कुछ मिला, झोलेमें भरकर घर आये। जूतेकी आवाज सुनते ही रसोईमेंसे श्रीमतीजी निकल आयीं। श्रीमतीको सशस्त्र देखकर मित्र महोदयके होश उड़ गये। उधर श्रीमतीजीने बेलन घुमाया इधर मित्र महोदय छलाँग मारकर चौखटके बाद, आँगनके बाद सड़क पार कर गये। बीबीजीका बेलन कपालक्रिया करनेके लिए उत्सुक ही रह गया। पूरे एक हफ्ते बाद श्रीमतीजीका गुस्सा कम हुआ तो मेरे मित्र महोदय घर लौटे। ऐसी बीबियाँ पूर्व

जन्मकी तपस्याकी फल हैं और बड़े भाग्यसे केवल भाग्यवानोंको ही मिलती हैं।

बाज-बाज बीबियाँ बड़ी शक्की-मिजाज होती हैं। मेरे एक दोस्त रातको घर जरा देरसे आया करते थे। उनकी श्रीमतीजी रोज उनसे जवाब तलब करतीं। दोस्त जरा चलते-पुरजे थे—सिनेमा, सम्मेलन, चायपार्टीके बहानोंसे चरा ले जाते। पर एक रोज बात चली तो महरिन कह बैठी—'बहूजी, बाबूजी देरसे आते हैं तो दरवाजा काहेको खोलती हो।' बात बाबीजीके भोले दिमागमें जम गयी। दूसरे रोज रातको बाबूजी फिर देरसे आये दरवाजा नहीं खुला। बहुत कुण्डी खटखटायी गयी, महल्लेके सब आदमी उठे मगर श्रीमतीजी नहीं उठीं। बाबूजी गुस्सेमें जाकर एक दोस्तके यहाँ सो रहे। दूसरे दिन सुबह आठ बजे घर जो पहुँचे तो देखा श्रीमतीजीका गुस्सा उतर चुका था। हाथ मुँह धुलाया। नाश्ता सामने लाकर रखा। पूछा—'रात कहाँ रहे?'

'कम्पनी बागमें जाकर सो गया था।' श्रीमतीजी चुप हो गयीं। पतिको फिर कभी देर आनेपर नहीं टोका।

बीबी और बच्चेका बहुत निकट सम्बन्ध है क्योंकि एकके आते ही दूसरेका आना शुरू होता है। और फिर तो ताँता लग जाता है जिसे या तो आप रोक सकते हैं या स्वयं भगवान। मेरे एक मित्र महोदय दृष्टिसे काफी प्रगतिशील हैं। प्रति वर्ष कैलेण्डरके अनुसार चलते हैं। करीब एक दरजन वार्षिक 'डायरियाँ' उनके घर मोजूद हैं। जब दूध पिलाना होता है तब नम्बर एक, दो, तीनकी गिनती पुकारनी पड़ती है। क्योंकि बीचमें यदि कोई भूल भी हो जाय तो उसका तब-तक पता नहीं चलता जबतक जन्मकुण्डली देखकर नामराशि न पुकारी जाय।

बच्चोंकी देखरेख मेरे मित्र स्वयं करते हैं। दूध पिलाना, नहलाना,

धुलाना—सारा भार मेरे मित्रके ऊपर ही रहता है। बात यह है कि उनकी पत्नी एम० ए० है इसलिए बच्चोंसे प्रेमके बजाय प्रेमके उपन्यास पढ़ना अधिक पसन्द करती हैं। श्रीमतीजीके प्रेमका ही प्रभाव है कि एक दर्जन पिल्ले मित्र महोदयके घरेलू अनाथालयमें पल रहे हैं। श्रीमतीजी कभी-कभी देख भर लेती हैं कि पतिदेव अपना काम ठीक तो कर रहे हैं। बच्चोंके शोरसे कभी उपन्यास पढ़नेका क्रम टूट जाता है। श्रीमतीजी इसे पसन्द नहीं करती। मित्र महोदयपर इसके लिए आये दिन अकसर डाँट पड़ा करती है।

कुछ बीबियाँ अपने बच्चोंका बेहद चाहती हैं। यहाँ तक कि अपने पतियोंको हाथ लगाने तक नहीं देती। ऐसी बीबियोंको खुश करनेके लिए कभी-कभी उनके बच्चोंको नाजायज घूस भी देनी पड़ती है। बच्चेकी तारीफ भर कर दीजिये, थोड़ी मिठाई और चाकलेट दिला दीजिये; फिर दोस्तकी बीबीको आपके विरुद्ध कोई शिकायत नहीं रह जायगी। मित्रको अपने साथ सिनेमा देखनेकी भी अनुमति मिल जायगी। बच्चोंके साथ ही कभी दोस्तोंकी बीबियोंकी भी खुशामद करनी पड़ती है और आप जानते हैं कि बीबियाँ अगर कहीं धोखा खाती हैं तो बस पुरुषोंकी तारीफके पुलपर।

फरमाइश नारीका शृङ्गार है और अधिकार भी। बीबियोंकी फरमाइशोंसे परेशान होकर बाज-बाज पति आत्महत्या तक कर बैठते हैं। ऐसे पति मेरे मित्रके अनुभवसे सबक लें। मेरे मित्रकी पत्नी जब कोई फरमाइश करती हैं तो वह 'अच्छा' कह देते हैं। यह 'अच्छा'का क्रम कुछ दिनों तक चलता है। जब बहुत जोर देती हैं तो 'बहुत अच्छा' कह देते हैं। इस तरीकेसे फरमाइशोंकी संख्या घटायी जा सकती है और बीबियोंकी आदत सुधारी जा सकती है। बीबियोंकी कैसी बातपर कभी 'नहीं' न कहिये। उनकी फरमाइशें पूरी करनेका वचन दे दीजिये। पर वचन पूरा करनेके लिए आप बाध्य नहीं

हैं। यह एक तरीका है जिससे चतुरसे चतुर बीबियाँ भी बेवकूफ बनायी जा सकती हैं।

बीबियोंने मेरे सभी मित्रोंको मुझसे छीन लिया है। आज वक्त काटनेके लिए मैं हरेकके घर हो आया पर सबके घरसे एक ही जवाब मिला कि 'नहीं हैं।' मैं साफ-साफ कहता हूँ कि बदलेकी भावनासे प्रेरित होकर ही मैं यह लेख लिख रहा हूँ। सचमुच मुझे बीबियोसे इतनी नफरत हो गयी है कि आज होलीके शुभ दिवस और रात्रिके सन्धिस्थलपर मैं आजीवन चिरकुमार रहनेका व्रत लेता हूँ। महर्षि कामदेव मेरे व्रतकी रक्षा करें।



यदि आप किसी अनुभवी पतिसे (मैं पति तो हूँ पर मेरी शादीको अभी साल भर ही हुए हैं इसलिये अपनेको अनुभवी नहीं कह सकता) विवाहित जीवनके अनुभव पूछें तो वह आपको बतायेगा कि विवाहित जीवनमें सबसे अधिक आनन्द पत्नीको खिझानेमें आता है। श्रीमतीजीकी तुनुकमिजाजीके मजे लेने हों तो उन्हें छेड़ भर दीजिये। बस तमाशा देखिये पहले तो जैसे कोई थाली गिर पड़ी हो—आपकी श्रीमतीजी उठेंगी। और इसी समय आपने जरा-सा

मुस्करा दिया तो आगमें घी पड़ जायगा और श्रीमतीजीका हृदय या तो भभक उठेगा या वह सीधे कोपभवनकी तरफ तशरीफ ले जायँगी। फिर रूठी हुई पत्नीको मनानेका मजा भाग्यवान पति ही जानते हैं। पत्नीको नाराज करके मनाना एक कला है जिसे अनुभवी पति ही जानते हैं। मैं आपको केवल थोड़ेसे अनुभव ही बता सकता हूँ।

प्रणय-कलह सिनेमाकी कहानियोंकी तरह आकर्षक और कालेजके रोमांसोंकी तरह मनोरञ्जक होते हैं। प्रणय-कलह स्वस्थ और सुखद विवाहित जीवनके लिए उतना ही जरूरी है जितना विश्वकी शान्तिके लिए महायुद्ध। यदि आप अपनी पत्नीसे बराबर प्रेम ही करते जायँगे तो आपका जी ऊब जायेगा। जैसे लगातार मिठाई खानेसे कभी-कभी हो जाता है। इसलिए मुखका स्वाद बदलनेके लिए जैसे आप मिठाईके बाद निमकीनकी ओर मुँह बढ़ाते हैं वैसे ही पत्नीको जी भर प्रेम करनेके बाद आपको झगड़ा करना चाहिये। विश्वास मानिये, झगड़ेमें आपको प्रेमसे ज्यादा मजा आयेगा। ये झगड़े दाम्पत्य जीवनके तराजूका संतुलन बनाये रखते हैं।

प्रणय-कलह सुखान्त ही होना चाहिये पर कुछ मूर्ख पतियोंमें परिस्थितिको सँभालनेकी योग्यता न होनेके कारण दुखान्त भी हो जाते हैं। बात बढ़ने पर अगर टेढ़ा घुमाव (सीरियस टर्न) ले गयी, और पति महोदयने बात बिगाड़ दी तो जीवनके कुछ बहुमूल्य अनुभव भी प्राप्त हो जाते हैं जैसे—फलाहार, दुग्धाहार, अनशन, कारावास आदि। पर यदि आपमें प्रत्युत्पन्न मतिका अभाव नहीं है तो आप बुरीसे बुरी स्थितिको मजेसे पार कर सकते हैं। पर इसके लिए व्यावहारिक मनोविज्ञानका ज्ञान आवश्यक है। आपका मस्तिष्क भी छिद्र रहित होना चाहिये यदि आपके दिमागने ऐन वक्त पर धोखा दिया तो सब गुड़ गोबर हो जायेगा। फलस्वरूप आपको सप्ताह भर फल और दूध पर भी रहना पड़ सकता है, सम्पूर्ण एकादशीका भी योग पड़ सकता है और

अगर मामलेने कहीं तूल पकड़ लिया और मैके चली गयीं तो चार छः महीनेका 'कारावास' और 'तनहाई' का दण्ड भी भुगतना पड़ सकता है। इन सबके लिए तैयार होकर ही मेरे नुसखेका प्रयोग करनेका साहस कीजिये, नहीं तो बादमें अकारण ही दोष न दीजियेगा।

पत्नी मनोविज्ञानका सबसे महान सत्य है कि स्त्रियाँ खुशामद पसन्द होती है। आत्मप्रसंशा सुननेके लिए सबसे अधिक लालायित रहती हैं। इसलिए यदि आप अपनी पत्नीको खिझाना चाहें तो जब प्रसंशाके शब्द सुननेके लिए वह आतुर रहे तो आप चुप रहिये, कुछ न कहिये। पत्नीके लिए आपकी यह उपेक्षा असह्य होगी। प्रशंसाके अभावमें पत्नी-का दम घुटने लगेगा। फिर तो वह घुटने टेक देगीं।

श्रीमतीजीने नयी-नयी साड़ी पहनी हो, टायलेट शृङ्गारके पश्चात् आपके चेहरेके दर्पणमें अपना मुँह देखनेके लिए आपके सामने खड़ी हों उस समय यदि आप उनके सौंदर्य शृङ्गारकी प्रसंशामें दो शब्द कहनेके बजाय मुँह फेर लें, किसी काममें लग जायँ, चुप्पी साध लें— तो फिर देखिये। अपनी घण्टोंकी मेहनत बेकार जाते देख श्रीमतीजी आपको जानबूझ कर छेड़ेंगी। उस समय यदि आप सहिष्णुतासे काम लें तो बस विजय आपकी है।

श्रीमतीजीने भोजनकी सामग्रीमें कोई नयी चीज बनायी हो और आप रसोईमें बैठे चुपचाप खा रहे हों। श्रीमतीजीके कान अपनी बनायी चीजकी प्रसंशा सुननेके लिए उत्सुक रहेंगे पर आपकी चुप्पीसे ऊबकर आखिर पूछेंगी कि अमुक चीज कैसी बनी। उस समय आपका, उपेक्षासे कह देना 'ठीक ही है'—श्रीमतीजीके अन्तस्तल पर चोट करेगा और वह तिलमिला उठेंगी। श्रीमतीजीके बनाये भोजनकी प्रत्येक सामग्रीमें दोष भी निकाला जा सकता है। पर आपकी बातें जरा जमनेवाली हों। जैसे—चाय जरा कड़वी है, हलवा पहले जैसा

नहीं बना है, घुँघनीमें मसाला कम पड़ा है, जरा मसाला तो अच्छी तरह डाला करो, चापमें आलू ज्यादा है, समोसे खस्ते नहीं हैं, आदि। ये थोड़ेसे वाक्य ही पत्नीके कोमल कलेजेको बेधनेके लिए काफी है। पत्नीके जीवनमे सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य है—भोजन बनानेका और यदि आप उसे इसीके लिए अयोग्य सिद्ध कर देंगे तो आप कल्पना कर सकते हैं कि उसके ऊपर क्या बीतेगी।

पत्नियाँ अपनी बुराई तो सुन सकती हैं पर अपने पीहर या मैकेकी बुराई सुनना गँवारा नहीं कर सकती। इसलिए आप अपने सालेके व्यक्तित्व और ससुरकी कँजूसीकी आलोचना कर एक अच्छा खासा गृहयुद्ध प्रारम्भ कर सकते है। पर हाँ अपनी किसी खूबसूरत सालीकी प्रसंशा करना न भूलियेगा। फिर देखिये तमाशा। श्रीमतीजी अपने पति देवताके मुखसे अपनी सगी बहनकी भी तारीफ नहीं सुन सकती—दूसरी औरतोंकी बात तो ताक पर रखिये। आपकी यह बात कि मैंने शादीका चुनाव करनेमें गलती की श्रीमतीजीके दिमागके पारेको आसमानमें पहुँचा देगा—जो केवल आँसूकी वर्षा ही से शान्त होगा।

श्रीमतीजी किसी दूसरी स्त्रीके रूप और गुणोंकी प्रसंशा सुनना आवश्यकतासे अधिक पसन्द नहीं करतीं। इसलिये आप अपनी परिचित महिलाओंकी जी भरकर प्रसंशा कर सकते हैं। मित्रोंकी पत्नियोंका भी, जिन्हें आपकी श्रीमतीजी जानती हों, तारीफके पुल बाँध दीजिये। इसके बाद देखिये कि श्रीमतीजीके हृदय मस्तिष्कपर इसकी क्या प्रतिक्रिया होती है। यहाँ मैं एक अपनी आपबीती भी सुना दूँ। एक बार मैं अपनी श्रीमतीजीसे एक डाक्टरनी की बड़ी प्रसंशा कर रहा था। श्रीमतीजी जल-भुन गयीं मैंने जब बताया कि डाक्टरनीकी अवस्था ६० सालकी है तब श्रीमतीजीका रोष झुंझलाहटमें बदल गया। सौतियाडाहका मनोवैज्ञानिक आधार ढूँढ़नेमे आपको विशेष कठिनाई नहीं होगी। अपनी श्रीमतीजीका निकटसे कुछ दिनों तक

अध्ययन भर कर लीजिये। फिर श्रीमतीजीको रुष्ट या प्रसन्न करनेमें समय-समयपर इस ज्ञानका उपयोग मजेमें कर सकते हैं।

पत्नीको परेशान करना हो तो जो रङ्ग, वस्तु, खाद्य पदार्थ, वह पसन्द करें ठीक उसके विपरीत आपकी पसन्द होनी चाहिये। यदि आपकी पत्नी चाहती हों कि आप सिल्कके सूट पहनें तो आप खद्दरका कुरता-धोती पहन सकते हैं। यदि आपकी पत्नी रोज शेव करनेके लिए बाध्य करे तो दाढ़ी रख लीजिये। यदि वह 'हमराही', 'मुक्ति', 'विद्यापति' फिल्में पसन्द करे तो आप अपनी पसन्दकी फिल्में 'हंटरवाली', 'पन्ना', 'राजा' दिखाइये। यदि वह शामको घूमने चलनेके लिए कहे तो आप मित्रोंके सङ्ग शतरञ्ज खेलनेको बैठ जाइये, आपके मित्रोंसे वह अधिक चिढ़ती हों तो आप रोज दो-चारको चायपर बुला लिया करें। कभी-कभी एकाध दर्जन मेहमान जिनमें औरतें भी हों पत्नीको बिना पहले सूचना दिये ही बुला लीजिये फिर पत्नीकी परेशानीका आनन्द लीजिये। आपकी पत्नी अपनी पत्नी है। आपको जीवन भर उसके साथ निर्वाह करना है। इसलिये आप जो कुछ करें सोच समझकर करें और केवल अपनी जिम्मेदारीपर करें। मेरी बात मानना कोई जरूरी नहां है। कहीं ऐसा न हो कि आपकी श्रीमतीजी रूठकर घरसे चली जायँ तो आप लेखकका नाम पता पूछते हुए मेरे घर आ धमकें।

लेख समाप्त करनेके पहले मैं एक चेतावनी भी दे देना उपयुक्त समझता हूँ। शेरनी पालने वाले पतियोंसे प्रार्थना है कि इन प्रयोगोंसे दूर ही रहें। यह लेख उनके लिए नहीं लिखा जा रहा है। दूसरी चेतावनी यह है कि यह लेख आपकी पत्नीकी आँखोंके नीचे नहीं पड़ना चाहिये। नहीं तो फिर मियाँकी जूती और मियाँका सर। और मुझे नाहक दोष दीजियेगा।



संसारका दूसरा महायुद्ध समाप्त हो गया। समाचार पढ़कर एकबारगी विश्वास नहीं होता। इतनी बड़ी लड़ाई क्या इतनी जल्दी खतम हो जायेगी। अभी कुल ६ वर्ष ही हुए थे इसका जन्म हुए—हम महायुद्धके शैशवका पूरा दर्शन भी न कर पाये थे कि सब कुछ समाप्त हो गया। आज जब सब सन्तोषकी साँस ले रहे हैं तब मैं अपनी असन्तोषकी कहानी सुनाने चला हूँ—।

लड़ाईके मजे! कुछ न पूछिये बस रह-रहकर यही खयाल आता है कि यह

स्वर्गीय आनन्द अब न मिल सकेगा। यह साम्यवाद, यह कम्युनिज्म, गल्लेकी दूकानकी यह भीड़, कपड़ेकी दूकानोंका यह मेला फिर नहीं देखनेको मिलेगा।

मुझे सबसे बड़ा दुख इस बातका है कि श्रीमतीजीकी फर्माइशें पूरी न करनेका मेरा सबसे बड़ा अस्त्र छिन गया। अभी तक तो जहाँ किसी चीजकी माँग होती मैं यह कहकर टाल दिया करता था कि बाजारमें नहीं मिलती। पर युद्ध समाप्त होते ही अब दूकानदार चोर बाजार बन्दकर पहलेकी तरह साहुजी बन जायेंगे तो मेरे लिये मुसीबत हो जायेगी? युद्ध कालमें जब किसी भी दूकानदारसे जरूरी कामकी कोई चीज माँगिये वह इन्कार कर देता था—एक बारकी बात है कि ब्लेड, टूथपेस्ट, स्नो, साबुन सबके लिए दूकानदारको सर ही हिलाते देख मैंने झुँझलाकर पूछा—कोंपर है! तो बेचारेने फिर सरलतासे सर हिला दिया।

युद्ध समाप्त होनेके पश्चात् ये दूकानदार फिरसे सरलताके पुतले और शिष्टताके अवतार बन जायेंगे। आप एक चीज माँगेंगे तो दस निकालकर दिखायेंगे और जबर्दस्ती आपकी जेबसे मनीबेग निकलवाकर खालीकर लेंगे। मुझे फिर युवककी याद आती है कि श्रीमतीजीकी दर्जनों झिड़की खाकर जब मैं बाजारका चक्कर लगाकर लौटता था तो मुझे इतना सन्तोष रहता था कि मेरे जेबमें मनीबेग चुपचाप पड़ा है। मैं चाहता भी तो नहीं कि युद्धकालमें मेरे मनीबेगकी शान्ति भङ्ग हो।

मुझे खुद अपने लिये अफसोस इतना नहीं जितना कि चोर बाजारके इन देशभक्त व्यापारियोंके लिए जो प्रत्येक सौ रुपया कमानेके बाद एक पैसा भिखमङ्गेको, एक आना गोशालेको और सालमें चार आना कांग्रेसको दान देते हैं।

अगर युद्धमें ये नहीं कमा सके तो युद्ध बन्द होनेपर क्या शहद

चाटेंगे। यही तो अवसर है कि अपनी लोहेकी विशाल तिजोरी कागजसे पाट दें। पर अफसोस बेचारोके मनकी मनहीमें रह गयी—युद्ध दस-बीस साल और नहीं चला नहीं तो कपड़ेके ये व्यापारी अपने शहरके नागरिकोंको (दोस्त और रिश्तेदारोंको छोड़कर) नग्नकर अपना घर नोटोंसे भर लेते। हमें इन बन्धुओके साथ सहानुभूति है।

पासके नगरके एक कांग्रेसी कार्यकर्ता युद्धकालमें फारवार्ड ब्लाकके नेतासे कपड़ेके व्यवसायी बन गये। कपड़ेके चोर बाजारमें नेताजीने जितना कमाया, जीवन भर नेतागिरी करनेपर भी उसका शतांश इकट्ठा न कर सकते। हमारे इस देशभक्त नेताके लिए युद्ध एक वरदान था।

युद्धकालमें देशसेवकोंका एक नया वर्ग निकल आया था जो जनताके खाने-कपड़ेकी फिक्र करता था। मैंने भी अपने नगरकी उक्त पार्टीके नेतासे एक जोड़े धोतीकी माँग की—तो बोले भाई मैं तुम्हारा प्रार्थना पत्र फोटो सहित 'लोक युद्ध'में छपवा दूँगा। मैंने पूछा—'अभी तक आपने कितना काम किया है।'

'भाई काम क्या—यही प्रचार कर रहा हूँ।'

युद्ध कालमें दाम्पत्य जीवन बड़ा सरल हो गया था। गृहकलहकी जड़—साड़ियाँ बाजारसे गायब थीं इसलिये श्रीमतीजी अपनी नौकरानी जैसी साड़ी पहनना पसन्द न कर अपने रिजर्व स्टाकका उपयोग करती थीं। हिटलर भी एक विशाल रिजर्व सेना रखता था तो फिर मेरी श्रीमतीजी ही क्यों न साड़ियोंका रिजर्व रखें। स्त्रियोंका शस्त्र साड़ी ही तो है। मतलब यह है कि युद्धके कारण मेरी श्रीमतीजीने ट्रङ्कमें पड़ी हुई बेकार साड़ियोंका भी उपयोग कर डाला। आपको यह जानकर दुख होगा कि साड़ियोंके रिजर्व स्टाक समाप्त होनेके पहले ही यह युद्ध समाप्त हो गया। यदि मुझे पहलेसे मालूम होता तो फोन करके

जनरल आइसनहावरसे कहकर मैं युद्ध कुछ दिन और चलानेके लिए कह देता।

युद्ध बन्द हो जानेसे अब मेरी गृह-शान्ति भङ्ग होनेका खतरा उपस्थित हो गया है। मुझे भय है कि श्रीमतीजी अपने पिछले रिजर्वकी पूर्ति और नई आवश्यकताओंकी एक साथ माँग करने जा रही हैं। शान्तिकालके प्रथम वर्षके बजटपर गृह सदस्याकी माँगकी जोरदार विरोधकी मैं अभीसे तैयारी कर रहा हूँ।

युद्धकालके बजटमें केवल एक साड़ीका आइटम निकाल देनेसे वर्षमें ८००) की बचत हुई और मेहमानोंके न आनेके अन्य वर्षोंकी तरह ३०० रुपये व्यय नहीं करने पड़े। मेहमानोंसे रक्षा राशनिङ्ग और रेलयात्राकी कठिनाइयोंने की। और ये दोनों महायुद्धकी सुपुत्रियाँ हैं। शान्तिकालमें मेहमानोंके आक्रमणकी आशङ्का हो रही है।

हमारे राष्ट्रीय समाचार-पत्रोंकी ज्यादती तो देखिये कि अपने नगरका महत्वपूर्ण समाचार भी नहीं छापते। उस दिन महायुद्धकी समाप्तिके समाचारवाला अखबार हाथमें लेकर सेठ उलूकचन्द अपने बरामदेसे सड़कपर गिरकर बेहोश हो गये। बात यह थी कि सेठजीके पास हजारों सिल चाँदी इस प्रतीक्षा में पड़ी थी कि युद्ध कोई नया भयङ्कर रूप लेगा। पर सेठजीकी आशापर झाड़ू फिर गया। सुना है कि सेठजीके साथियोंकी शहरमें कमी नहीं जो आजकल दहीकी लस्सी और कसेरूके शरबत पीकर महाशान्तिको कोसते हैं।

महायुद्धने इधर आँखें मूँदी तो देखता हूँ मेरे मनोवेगका भी मुख बन्द होनेवाला है। क्योंकि मैं ऐसे विभागमें नौकर हूँ जो केवल युद्ध-कालीन अस्तित्व रखता है। मेरी लम्बी-चौड़ी बातोंसे तो आपने समझा होगा कि मैं कोई फौजी ठीकेदार या चोर बाजार एसोसिएशनका प्रेसिडेण्ट हूँ। जी नहीं, आपका खयाल गलत है। कुछको तो महँगीके भत्तेकी पड़ी है पर मेरे तो मूलधनपर ही महा-'शान्ति'ने आक्रमण कर

दिया है। मैं औरोंकी तरह अक़्लमन्द होता और युद्धकालमें जीवन भरके लिए अर्जन कर लेता तो जरूर कहता चलिये अच्छा हुआ युद्ध समाप्त हो गया। पर मेरे तो अस्तित्वका सवाल है इसलिये मुखसे आपसे आप निकल पड़ता है—

—अफसोस लड़ाई खतम हो गयी !



कंट्रोल कथा

नैमिषारण्य क्षेत्रमें श्री कागभुशुण्डिजी कन्ट्रोलकी कथा कह रहे थे। नाईके अभावमें लम्बी-लम्बी दाढ़ियाँ लटकाये, वस्त्रके अभावमें मृगछालाओंसे शरीरके सब अङ्ग ढके हजारों ऋषि आश्चर्यचकित मुँह बाये कलियुगी कंट्रोलकी कथा सुन रहे थे।

'तो भैया कलियुगके देवता कंट्रोल और देवताके वाहन-साँड़, जिस प्रकार साँड़ोंपर कंट्रोल नहीं किया जा सकता उसी प्रकार साँड़ोंको भी कलियुगके कंट्रोलकी हरी खेती चरनेसे रोका नहीं

जा सकता। इन दागी-अनेक बार कानीहौदमें बन्द किये जानेवाले साँड़ोंके सिवा, बाकी मनुष्य, पशु-पक्षी, जीव-जन्तु, नाग, देव, किन्नर आदि सभी प्राणी कंट्रोलके स्वर्गीय सुखसे वञ्चित हैं। कलियुगके प्रतापी देवता कंट्रोल तथा उसके वाहन कांग्रेसी साँड़ोंकी अनुमतिके बिना कोई जीव जीवनोपयोगी तथा अलभ्य छप्पन पदार्थोंका भोग नहीं कर सकता। आपके यहाँ जङ्गलमें कन्दमूल फलपर कोई कंट्रोल नहीं, पूरा स्वराज है। जहाँसे जिसके जीमें आया उखाड़ लिया, लपकके तोड़ लिया। कोई मना करनेवाला नहीं, कोई रोकनेवाला नहीं। पर कलियुगमें खाने-पीने, आने-जाने, नाचने-गाने, रोने-चिल्लाने धर्म-पत्नीके साथ धर्मकृत्य करनेपर भी कंट्रोल रहेगा। अपनी इच्छासे आदमी केवल कुएँमें कूद सकेगा, जहर खा सकेगा या गङ्गामें डूबकर मर सकेगा। यद्यपि मरने, आत्म-हत्या करनेपर भी कंट्राल है पर आदमी अक्लमन्द हो तो चुपकेसे मर सकता है। मैं पहले कह चुका हूँ कि कलियुगमें साँड़ोंके लिए खुली छूट रहेगी, पर धर्मपत्नियोंपर प्रतिबन्ध रहेगा। बच्चा पैदा करनेके सिवा इन्हें कोई सुविधा न दी जायगी। अधर्मपत्नियाँ बच्चा पैदा करनेपर भी कंट्रोल करनेमें समर्थ होंगी। यह कलियुगकी माया है।

प्रश्न—'अधर्म-पत्नी'की परिभाषा बतलाइये।

कागभुशुण्डि—जिसने बिना पतिके एक बार भी पतिसुख प्राप्त किया उसे अधर्म-पत्नी कहते हैं। सोसायटीकी अविवाहिता कुमारियाँ, चिरकुमारी अध्यापिकाएँ, सदासुहागिन मङ्गल-मुखियाँ, कार्यकर्त्रियाँ आदि अधर्म-पत्नी और ठेठमें 'राँड़' संज्ञासे विभूषित होती हैं। तो मैं अधर्म-पत्नियों और कंट्रोलका सम्बन्ध बता रहा था। कलियुगमें महाप्रभु गौराङ्गके शासनकालमें अधर्म-पत्नियोंकी कृपासे नौकरी, रोजगार, तरक्की, लाइसेंस, एजेंसी सभी सुख सुविधाएँ प्राप्त होती थीं, तब उनके दलालों की चाँदी थी, वे मालामाल हो रहे थे। साँड़ोंके युगमें भी राँड़ोंके

दलालोंकी गोटी लाल है। साँड़ोंको गुड़की भेली खिला रहे हैं, गल-बहियाँ दिये घूम रहे हैं। सर पर गाँधी टोपी है तो गाँधी बाबाका आशीर्वाद प्राप्त है। शरीरके एक रोमसे, बालसे भी, शुद्ध हाथके बुने खद्दरके तारसे स्पर्श हो गया तो पापोंके पिछले पाप धुलकर साफ हो गये। फिर चाहे वह चोरबाजारका सरदार हो, राँड़ोंका दलाल हो, ४२ का कलंक ही क्यों न हो—सरपर गाँधी टोपी रखते ही, काँग्रेसको चवन्नी दक्षिणा देते ही खरा देशभक्त बन जाता है। परन्तु उसमें एक गुण होना जरूरी है, जिसके बिना मोक्ष नहीं मिल सकता—वह है साँड़ोंकी मालिश करनेकी योग्यता। राजनीति और रोजगार में सब कुछ क्षम्य है अधर्म-पत्नियोंकी दलाली, साँड़ोंकी मालिश सब करना पड़ता है। हाँ, तो मैं कह रहा था कि इन अधर्म-पत्नियोंकी कृपासे कितने ही अजामिल, व्याध तर गये। कलियुगमें जिसे मोक्ष चाहिये उसे अधर्म-पत्नियोंकी आराधना, साँड़ोंकी पूजा करनी पड़ेगी।

प्रश्न—साँड़ोंकी पहचान क्या है?

कागभुशुण्डि—मेला, नगर, गाँव, राह-बाट, गली, सड़क मोड़, चौराहा जहाँ भी आप किसी खद्दरधारीको हुरपेटते देखिये—समझ लीजिये कि साँड़ है। साँड़ोंकी कई किस्में होती हैं। छोटे, मँझले और बड़े। पर साँड़ोंमें एक गुण तो अवश्य मिलेगा कि सभी हुरपेटते हैं। सींग दिखाकर कहेंगे—जानते नहीं मैं कौन हूँ? साँड़ोंकी यह अमोघ पहचान हैं। पुलिस कान्स्टेबल, सप्लाई इन्सपेक्टर, दारोगा, मजिस्ट्रेट सभी सींग देखकर साड़ों को पहचान लेते हैं। जो समय की गति और साड़ोंकी भृकुटि नहीं पहचान पाते वे धोखा खाते हैं, नौकरी से हाथ धोते हैं। तो मैं बता रहा था कि साँड़ तीन प्रकारके होते हैं। छोटे, मझोले और बड़े। छोटे साँड़ोंकी वेष-भूषा साधारण होती है। सींगों पर गान्धी टोपी तो सभी साँड़ोंके रहती हैं पर छोटे साँड़ खद्दरका कुरता और और जवाहर जाकेट पहनते हैं। खली-भूसेसे ही सन्तोष करते हैं।

राशनकी दूकानोंमें कभी-कभी मुँह मार लेते हैं, लकड़ी-कोयलेकी दूकानोंकी भीड़में कभी-कभी घुस जाते हैं। छोटे साँड़ोंकी जरा कम चलती है। इसलिए मुँह मारनेसे जो कुछ मिल जाता है उसी पर सन्तोष करते हैं। मझोले साँड़ राशन, सप्लाईके दफ्तरोंमें घुस जाते हैं और मनमानी करते हैं। कांग्रेस कमेटीके दफ्तरोंमें बँधे रहते हैं। सार्वजनिक सभाओंमें ये अपनी सींगोंका प्रदर्शन करते हैं। इनमेंसे कुछ साँड़ बहुत प्रदर्शन प्रिय होते हैं। सालमें एक बार इन साँड़ोंकी प्रदर्शनी तो होती ही है जिसमें नगरके प्रमुख साँड़ोंका सङ्गम होता है। दूर-दूरसे लोग इन्हें देखने आते हैं। अखबारोंमें इनका विज्ञापन होता है, फोटो छपता है। महीने भर खली-भूसेका प्रबन्ध रहता है, आगेके लिये भी कुछ बच जाता है।

सबसे बड़े होते हैं दागी साँड़। इनकी हुरपेटमें बड़े-बड़े आ जाते हैं। इनके चरनेके लिये बड़ी-बड़ी जमींदारियाँ रहती हैं। साधारण गुड़की भेलीसे ये प्रसन्न नहीं होते। प्रत्येक चीज़में आधा माँगते हैं। बढ़कर मुँह मारते हैं। राशनिंग, सप्लाई अफसर, कोतवाल, कलक्टर सब हाथ जोड़ते हैं। सब अपनी सामर्थ्य भर खली, चोकर भूसा लेकर पहुँचते हैं। साँड़ सेवक इन उपहारोंपर खुलकर चरते हैं। दागी साँड़ बोरा नहीं, शाहतूश ओढ़ते हैं। इनके आगे-पीछे चार-चार छोटे और मझले साँड़ चलते हैं। असेम्बलीमें इनकी दहाड़ सुनकर कँट्रोलाधिपतिका सिंहासन डोल जाता है। गाँव देहातके साँड़ भी बहुत खतरनाक होते हैं। पुलिस अदालतके अभावमें गाँवके ये राजा होते हैं। गाँवकी खेती असलमें यही चरते हैं। साँड़ोंका हुक्म भी बहुत भयानक होता है। नगर काँग्रेस कमेटीके आँगनमें, चुनावके मैदानमें छोटे, बड़े, मँझले और दागी साँड़ोंमें भयङ्कर युद्ध होता है, वह दर्शनीय होता है। आक्रमण, प्रत्याक्रमण, भयङ्कर दहाड़, गुर्राहट, चाल-पैंतरे, सींगोंकी सफाई देखकर दङ्ग रह जाना

पड़ता है। नगरके नाकों, चौराहों पर आज साँड़ोंका राज है, राँड़ोंका आधिपत्य है। इनसे भगवान ही बचाये।

प्रश्न—कन्ट्रोल क्या है?

कागभुशुण्डि—रामायण खतम हो गयी तो पूछते हैं सीता किसकी जोरू। अरे भाई, कन्ट्रोल का मतलब है जो चीज़ आप चाहते हैं वह न मिले, और मिले तो चोर बाजार में।

प्रश्न—महाराज चोर बाजार क्या है?

कागभुशुण्डि—चोर उसे कहते हैं जो साँड़ोंको गुड़की भेली खिलाता है, सरकारी अफ़सरोंको राँड़ोसे प्रसन्न करता है। वह जो अँधेरेमें रोजगार करता है, उसे चोर बाजार कहते हैं। जिसे देखकर बड़े-बड़े दागी साँड़ आँख मूँद लेते हैं। कहा जाता है कि इस रातके काले रोजगारमें कुछ दागी साँड़ भी सम्मिलित हैं, पर दिनकी रोशनीमें खुले निर्भय घूमते हैं।

तो भैया, कन्ट्रोलकी कथा बहुत लम्बी है। दुनियामें सब अपने घातमें, स्वार्थमें लगे रहते हैं। जिसको जहाँ दाँव मिला मार लिया। किसीको क्यों दोष दो! काँग्रेस का राज है—स्वराज है अपना राज है—साँड़ोंने बहुत त्याग किया है देशके लिए। बहुत दिनों तक कानी-हौदमें बन्द रहे। अब यदि कुछ कन्ट्रोलकी कमाई करते हैं तो क्या बुरा है? विश्वनाथ बमभोलाकी नगरीमें साँड़ोंपर कन्ट्रोल करनेकी हिम्मत कौन करेगा। हाई कमाँडके त्रिशूलके डरके मारे जनताकी बोलती बन्द है, और जनताके प्रतिनिधि बनकर असेम्बलीके दागी साँड़ कन्ट्रोलकी खेती खुले आम चर रहे हैं। भगवान चाहें तो भी कन्ट्रोल नहीं टूट सकता। पर जनता चाहे तो इन दागी साँड़ोंको बाँध-बाँधकर अण्डमान भेजा जा सकता है।

आज चाय नहीं बनी



अभी अभी सोकर उठा हूँ खुद नहीं उठा हूँ बल्कि शोर गुलसे नींद खुल गयी है। आँख खुली तो देखता हूँ दुनियामें बहुत बड़ा हंगामा मचा हुआ है। श्रीमती जी कम्युनिस्टों की तरह सशस्त्र क्रान्ति करनेके लिए तैयार बैठी हैं और घरके वर्त्तमान और भारतके भावी नागरिक व्यक्ति स्वातंत्र्य-के लिए संघर्ष कर रहे हैं। सबेरे-सबेरे यह गृह-युद्धका दृश्य मुझे पसन्द नहीं आया। लड़ाईकी खबरें मुझे अखबार-में ही अच्छी लगती हैं। सीधा मोरचे-

से सम्पर्क रखना मैं नहीं पसन्द करता। एक प्याली चाय और सबेरेका अखबार—बस घंटे भरके लिए विश्वकी राजनीति मेरे दिमाग़में और सातों समुन्दर मेरे चायके प्यालेके अन्दर बन्द हो जाते हैं।

मगर आज आँख खुलते ही नवीन दृश्य दिखाई दिया। श्रीमतीजी डा० लोहियाकी तरह गाल फुलाये बैठी हैं। मैंने पूछा—'चाय?' जवाब नदारद।

'और अखबार?' कोई उत्तर नहीं। मैंने देखा मामला संगीन है। क्रासवर्ड पहेलीका सूराग़ लगानेके लिए मैंने खुफ़िया अधिकारियोंकी तरह गृह-युद्धमें भाग लेने वाले सबसे छोटे सदस्यको पकड़ा।

'बेटा मुन्नू क्यों रो रहे हो?'

'अम्माँने मारा है।'

'क्यों?'

'चाय माँगी थी।'

'चाय नहीं बनी?'

'नहीं'—बच्ची मीना आगे आयी।

'माँ कहती है—चीनी नहीं है। क्या अपने सरसे बनाऊँ!'

श्रीमतीजीके सर ख़राब होनेका कारण मालूम हो गया।

'और आज अख़बार नहीं आया सतीश?'

'आया था पिता जी!' सिसकते हुए जवाब दिया।

'क्या हुआ?'

'मुन्नूने फाड़कर नाव बना डाली, और मीनाने चूल्हेमें डाल दिया।'

'ठीक।'

श्रीमतीका दिमाग़ी थर्मामीटर अकारण नहीं बिगड़ा है। मैंने

गुस्सेका पारा समुद्रकी सतह पर लानेके लिए अपीज़मेंटकी पालिसी अख्तियार की।

'चाय नहीं तो न सही, तुम क्यों नाराज़ हो?'

बादल और गुस्सा जब ज़्यादा तेज़ होता है तो पानीके रूपमें बदल जाता है। श्रीमतीजीकी आँखें भी छलछला आयीं।

'मुझे इस जेलखानेसे मुक्त करिये। मैं कुछ दिनोंके लिये दिल्ली जाना चाहती हूँ।'

'मुझे कोई एतराज़ नहीं। पंडित पंतके लखनऊमें चायके लिए चीनी नहीं मिलती पर पंडित नेहरूकी दिल्लीमें शायद मिल जायगी!'

'जहन्नुम में जाय आपकी चाय और चीनी। एक-एक चीज़की क़िल्लत; एक-एक चीज़के लिए मुसीबत। जीमें आता है कि लखनऊ छोड़कर पाकिस्तान चली जाऊँ, क्यों! आपको मज़ाक सूझा है। मैं एक मिनट भी यहाँ नहीं रहूँगी।'

'क्यों भाई, दोष चन्द्रभानु गुप्तका और सज़ा भोगें भैयाजी, यह कहाँ का न्याय है?'

'तुम्हें अखबारके दफ्तरसे फ़ुरसत नहीं, यहाँ बच्चे चायके लिए बिलबिलाते हैं। मुझसे नहीं देखा जाता।'

'भाई अखबार वाले चीनीके मिलमालिकोंके दामाद तो हैं नहीं कि उनके घर कोई चीनी पहुँचा देगा। कोशिश भर अपने हाथ है। करके देखूँगा। फ़िलहाल आज तो चाय होटलसे मँगा लूँगा।'

'मेरे पास इतने पैसे नहीं कि होटलसे चाय मँगाऊँ। बाज़ारसे जाकर गुड़ ही लाइये।'

'भाई गुड़की चाय सर्वोदयवादी पियें अपने राम तो अखबारमें जाकर एक दर्जन गाली देंगे। आज शाम तक ज़रूर कोई भला आदमी चीनी दे जायेगा।

'आखिर बाज़ारकी चीनी भी गयी कहाँ?'

'तुम भी कांग्रेसियोंकी तरह बात करती हो। अरे बाज़ारमें इतने मोटे-मोटे चूहे हैं कि एक ही रातमें सभी चीनी चट कर गये। बची-खुची चीनी खद्दरके झोलेमें रखकर बहुतसे जनसेवकोंको ले जाते मैंने देखा है।'

'तुम क्यों नहीं लाये?'

'मैं लाता तो फिर गाली कैसे देता!"

'चाहे बच्चे चीनी बिना दूध चायके लिए बिलबिलाते रहें!'

'तुम एक काम करो। महिलामंडलका एक जुलूस निकालो। अपनी सहेलियोंसे कह देना कि सबलबल पूरी पलटनके साथ आयें। आगे-आगे बच्चोंको कर देना। वह शोर मचायेंगे 'चीनी दो, चीनी दो, नहीं तो कुरसी छोड़ दो'। अमीनुद्दौला पार्कमें जाकर एक प्रस्ताव पास कर लेना। मैं कल अखबारमें बड़े-बड़े शीर्षक से छाप दूँगा।'

'तो क्या होगा?'

'सप्लाई अफसर पीठ पर एक बोरा चीनी लाकर तुम्हारे घर पहुँचा जायेगा।'

'सो तो बादमें होगा। पहले बिस्तरसे उठकर कहींसे ज़रूर चीनी ले आइये।'

'कहाँसे ले आऊँ?'

'चोर बाज़ारसे।'

'सो तो मेरी आत्मा गवाही नहीं देती।'

'किसीसे माँग लाइये।'

'चीनीकी भीख मागूँ?'

'बड़े रईस हैं तो एक चीनीकी मिल ही क्यों नहीं खोल लेते!'

'सो तो मैं सोच रहा हूँ। हमारी सरकार यदि इसी प्रकार कन्ट्रोल, डिकन्ट्रोल, फिर कन्ट्रोल करके तोंद वालोंका भला करती रही तो अपने

राम भी गमलेमें गन्नेकी खेती करने वाले हैं। कमसे कम चायके लिए चीनी तो निकल ही आयेगी।'

श्रीमतीजीको जो गुस्सा आया तो उन्होंने खाली केटली चौके पर पटक दी। चलिये आज चाय से छुट्टी मिली।

बटन



आज सिनेमा देखनेका इरादा हुआ। पर कुरतेके बटन टूटे हुए थे। श्रीमतीजी बटन टाँक रही थीं। मैं बटनपर कहानी लिखनेकी सोच रहा था। पर इसके लिये थोड़े 'रिसर्च' की जरूरत थी। मस्तिष्कने साथ दिया। मैं 'कॉमन-सेन्स' की सर्चलाइट लिए बटनकी 'पुनर्खोज' (रिसर्च) करने निकल पड़ा।

बटनका इतिहास कोई विशेष पुराना नहीं है। सभ्यताके आरम्भिक कालमें बटनका नामोनिशान तक नहीं

था। बिना बटनके काम चलता था। ऐसे कपड़े पहने जाते थे, जिनमें बटन टाँकनेकी जरूरत ही न पड़ती थी। कमरके ऊपरी भागके लिए दुपट्टे तथा नीचेके भागके लिए धोती, पीताम्बर आदि, बस यही कपड़े थे।

सच पूछिये तो बटनका आविष्कार बहुत दिनों बाद कला-प्रिय मुगलोंके जमानेमें हुआ। वह भी रूपसी नूरजहाँकी एक दासीके द्वारा। बटनके आविष्कारकी कहानी भारतके बड़े-बड़े इतिहासज्ञोंको भी नहीं मालूम। यदि आप अनभिज्ञता प्रगट करें, तो कोई आश्चर्यकी बात नहीं। उत्सुक पाठिकाएँ धैर्य-पूर्वक सुनें।

एक दिनकी बात थी। बादशाह सलामतके आनेमें थोड़ी देर थी। नूरजहाँ शृङ्गार कक्षमें थीं। दासियाँ रूपसीका शृङ्गार करनेमें व्यस्त थीं। आजके लिए खास बसन्ती रङ्गकी चोली चुन ली गयी गयी थी। केश-रचना समाप्त होनेपर चोलीकी माँग हुई। नूरजहाँने एक हसरत-भरी निगाह चोली पर डाली। दासियोंने तारीफके पुल बाँध दिये। बेगम बसंती रंगकी चोली पहनकर फूल उठीं। जैसे किसी वाटिकापर बसंतने कब्जा जमा लिया हो, या बेगमके गोरे बदन-पर सौन्दर्यकी एक परत और जम गयी हो! बेगम अब वासंतिक सुषमा बिखेर रही थीं। नाजसे आइनेमें अपनी खूबसूरती देख वह अपने आप ही मुस्करा उठीं।

'देर क्यों हो रही है?'—नूरजहाँने विलम्ब होते देख पूछा।

'बेगम-बीबी, चोलीमें बंधन तो है ही नहीं!'—दर्जीकी शामत आयी जान सब चुप हो गयीं। पर उनमें दर्जीकी एक प्रेमिका भी थी। वह कैसे चुप रह सकती थी। और थी भी वह बड़ी चालाक। नाम था बिट्टन। बोली—'घबराइये नहीं सरकार, अभी ठीक किये देती हूँ।' उसने फौरन अपने कानसे सोनेका फूल निकालकर चोलीमें टाँक दिया! काम चल गया। नूरजहाँकी खुशीका ठिकाना न रहा।

उसने बिट्टनको गले लगा लिया, और बोली—'आजसे मेरी चोलियोंमें सोनेके फूल टँका करेंगे। इनका नाम होगा बिट्टन, क्यों खुश हो न? कहकर उसने बिट्टनके कपोलोंका गुलाबी भाग चुटकियोंसे मसल दिया। बिट्टनका नाम सदाके लिए अमर हो गया।

उसी समयसे इसका उपयोग होने लगा! धीरे-धीरे प्रचार बढ़ा। 'बिट्टन' भी लोगोंकी ज़ुबानोंपर घिसते-फिसलते 'बटन' हो गया। राजाके महलोंसे लेकर झोंपड़ियों तक इसका प्रवेश हो गया।

नूरजहाँके बाद औरंगजेबके समय तक काफी प्रचार रहा। पर औरंगजेबको बटनसे कुछ खास चिढ़-सी थी। झक ही तो है। जन्मसे कट्टर लीगी भला इन कलापूर्ण चीजोंकी कद्र क्या जाने? उसने एक नयी चीज निकाली—'घुण्डी'! कपड़ेकी गोली-सी बनाकर उससे 'हुक'का काम लिया जाता था। आज भी गांधी बाबाके अनुयायियोंने इसीकी नकल करके खद्दरके बटन निकाले हैं। पर खद्दरकी पोटरीमें वह सौन्दर्य कहाँ! कला-सौन्दर्यकी दृष्टिसे 'बटन' अधिक आकर्षक है। इसने न केवल लोगोंके दिल ही पर, बल्कि सरसे लेकर पाँव तक समूचे बदनपर कब्जा जमा लिया! और औरंगजेबके लाख कोशिश करनेपर भी जिस तरह हिन्दुस्तानसे हिन्दू, शिवलिंग और चोटी न गायब हो सकी, उसी तरह बटन भी बराबर बना रहा।

इसका प्रचार दिनों-दिन बढ़ता गया, अंगरेजोंने भी बटन लगाना हिन्दुस्तानसे ही सीखा। इसके पहलेकी हालात किसी तवारीखमें नहीं मिलती। 'हिन्दुस्तान' बटनका मादरे-वतन होते हुए भी, हिन्दुस्तानियोंने बटनकी कुछ खास कदर न की। अंगरेज स्वभावसे ही कलाप्रिय होते हैं और गुणग्राहकता उनका प्रधान गुण है। बटन जैसी हरदिल-अज़ीज चीजको देखते ही उसे वे अपने देश उठा ले गये। फिर क्या था। इंग्लैंडमें बटनकी भरमार हो गयी। कोट, ओवरकोट, वेस्टकोट, पैन्ट तथा ब्लाउज, फ्राक, जम्पर सभीपर बटन ही बटन!

बिना बटनके वह कोई कपड़ा ही नहीं पहनते। यदि मैं कहूँ कि अंगरेजी सभ्यता बटनसे निर्मित तथा बटन ही पर आश्रित है, तो कोई आश्चर्योक्ति नहीं होगी।

भारतमें भी अंगरेजी सभ्यताके प्रसारके साथ बटनोंका प्रचार भी बढ़ गया। आजकल तो बाबू लोगोंकी गरदनपर, छातीपर और जूतोंपर भी बटन मिलेंगे। जेन्टिलमैन तो शरीरके प्रायः सभी महत्त्वपूर्ण स्थानोंपर 'बटन' का प्रयोग करते हैं। श्रीमतियोंकी साड़ियोंके भीतर यदि आप ध्यानसे देखें, तो आपको जुगनूकी तरह चमकते हुए रंग-बिरंगे 'बटन' दिखाई देंगे! यदि आपकी प्रेमिका आपसे रुष्ट होकर मुँह फेर ले, तो आप उसे छेड़कर और नाराज न करें; बल्कि पीठपर पूरा कब्जा जमाये अछूती कलियोंसे गुँथी नागन-सी चोटीको हटाकर मोतीसे चमकते हुए 'बटन' गिन डालें, जिनकी वजहसे सुकुमार गातपर रेशमी कनात कसी हुई है! खुदाके लिये बटन खोलनेके लिए हाथ बढ़ाकर आफतको न्योता न दें।

बटन दबाते ही कभी-कभी बिजली दौड़ जाती है। इसीसे शायद बिजलीसे काम लेनेवालोंने 'स्विच'का नाम ही बटन रखा है। यहाँ एक और बटनकी याद आ गयी। बुजुर्ग पाठकोंसे माफी माँगनेकी आवश्यकता पड़नेपर भी, कवित्तके एक चरणको उद्धृत करनेकी इच्छा नहीं रोक सकता। कुचोंकी उपमा देते हुए किसी कविने कैसी गजबकी उड़ान ली है—'कामके जगाइबेको विद्युत बटन हैं।' कविने सचमुच बटनमें जान डाल दी है। बटन भी क्या चीज है! मेरे एक दोस्त बटन पर फरमाते हैं—

बटन, छोटे सुफेद चिकने-से,
किसीके दिलकी तुम भी आशा हो!
चिपक कमसिन कुर्तोके सीनेसे
हुए तुम फूलकर बतासा हो!

क्या खूब ! बटनको लेकर कितनोंने जमीन आसमान एक कर दिये हैं। हाँ, मैं कहानी जो कह रहा था। वह भी 'बटन' ही की तो बात थी।

उस दिन 'सिनेमा'में टिकट न मिलनेके कारण लौटा, तो देखा कि टाउन-हॉलमें कोई 'मीटिंग' हो रही है। बेकार क्या करता ? घुस गया। वक्ता महोदय साम्यवादके विरुद्ध लेक्चर झाड़ रहे थे। मैं ठहरा पक्का 'कम्युनिस्ट' ! खड़ा-खड़ा सुनता रहा। लेकिन हजरतने जब भारतीय साम्यवादियोंको 'रूसका स्वप्न देखनेवाले भालू' कह दिया, तो मेरा खून खौल उठा। बिना किसीसे कुछ कहे सुने मैं सीधा मंचपर जा धमका ! सभापतिजी सहम गये। वक्ता महोदय दुम दबाकर नीचे उतर आये। मैंने बिना सभापतिकी अनुमति लिये ही बोलना शुरू कर दिया। 'बहनो ! सभापतिजी....और....!'—सामने बैठे हुये एक लड़केने जोरोंसे खीं-खीं करके दाँत निपोर दिये। गुस्सेसे उसकी ओर एक नजर देखकर मैंने अपना वाक्य पुनः दुहराया।

'बहनो सभापतिजी और भाइयों....!' सामने बैठे हुए कुछ नवयुवक हँस रहे थे, पर मैं उनकी उपेक्षा करता हुआ बोलता ही रहा।

'मैं पक्का साम्यवादी हूँ....'—सामने बैठे हुए लड़कोंकी खीं-खीं अब हँसीमें परिणत हो गयी थी, उसमें बड़े-बूढ़े भी योग दे रहे थे। मैंने गुस्सेसे दाँत पीसकर कहा—'मैं पक्का साम्यवादी हूँ, रूसका भालू देखनेवाला स्वप्न नहीं।'—जनता अट्टहास कर उठी। ऐसे गम्भीर प्रश्नपर जनताकी उदासीनता देख मुझे उनकी बुद्धिपर तरस आया। मैंने सभापतिजीकी ओर देखा, वह भकुये-से टुकुर-टुकुर मेरी ओर ताक रहे थे। पुरुषोंको उपेक्षाकी दृष्टिसे देख मैं महिलाओंकी ओर घूमा। उनकी सहृदयतामें मुझे पूर्ण विश्वास था। पर यह क्या ? अचानक ड्राप-सीनका परदा गिर पड़ा। सबके मुँहपर घूँघट खिंच गये। घूँघटके भीतरसे हँसीका कलनाद सुनाई दे रहा था। मैं चकित रह गया। समझमें न आयी क्या बात थी ! परदाफाश करनेवाली बीसवीं सदीकी

बीबियोंको एक मर्दसे परदा ? ताज्जुब ! आखिर मैं कोई बाबा आदम तो था नहीं, जो मुझसे शरम करनेके लिये घूँघट खींचने पड़ें। मैं पुरुषोंकी ओर घूमा, देखा सब हँस रहे थे। मुझे ऐसे लगा, जैसे मेरे चारों ओर बन्दर दाँत निपोर रहे थे। सभापतिकी ओर घूमा, तो इस बार वह भी मुझे देखकर हँस रहे थे। मैं पागल हो उठा ! उस वक्त सचमुच मैं गुस्सेसे काँप रहा था। सभापतिजीने तुरत खड़े होकर मुझे सहारा देकर नीचे उतारा, और मेरे कानके पास मुँह लगाकर बोले—'अगर बुरा न मानिये तो एक बात कहूँ ?'

मैं चुप रहा।

'आपके पैन्टके बटन खुले हैं !'—उन्होंने धीरेसे कहा।

'क्या कहा ?'—मैं चिल्ला उठा। और बिना उत्तरकी प्रतीक्षा किये क्षण-भरमें टाउनहालसे बाहर हो गया।

घर आकर उस दिन मैंने कसम खा ली कि कमरके नीचे ऐसा कोई भी कपड़ा न पहनूँगा, जिसमें बटनकी जरूरत पड़े।



बिगड़े रईस

लखनऊ कुछ कामसे गया था। होटलसे उतरकर अमीनाबाद पहुँचा ही था कि सतीशसे मुलाकात हो गयी। एक नये शहरमें किसी पुराने दोस्तसे मिलकर कितनी खुशी होती है यह अनुभव करनेकी चीज है।

'आओ तुम्हे घुमा लाऊँ'—कहकर वह चौराहेसे एक पतली सड़ककी ओर घूमा। घूमना तो मैं चाहता ही था पर पूछा—'कहाँ।'

'एक पुराने रईसके यहाँ चल रहा हूँ।'

'शामका वक्त है और फिर लखनऊकी शाम। बेवकूफी न करो।'

'मेरा दिमाग ठीक है चिंता न करो।'

'और जिस नवाबजादेके पास चल रहे हो उसका दिमाग तो ठीक है। वहाँ से लौटनेपर मेरा दिमाग तो ठीक रहेगा?'

'जीहाँ, बेकार दिमाग मत चाटो।'

सतीश तीन-चार गलियोंको पार करता एक मकानके पास पहुँचा। वह मकान किसी वक्त आलीशान रहा होगा। पर इस समय खंडहर ही कहना ज्यादा उपयुक्त होगा—ईंटोंका ढेर, टूटे हुए दरवाजे पारकर हम लोग अन्दर घुसे। इमारतका जो हिस्सा गिरनेसे बच गया था उसमें आदमीका रहना असम्भव था। इनमेंसे बड़े कमरेके सामने पहुँचकर सतोशने पुकारा—'बड़े साहब हैं क्या?'

'कौन साहब हैं, अन्दर आइये।'

हम लोग अन्दर पहुँचे।

'अख्खाह, सतीश बाबू हैं।' कहकर एक ढली हुई उम्रके व्यक्तिने हमारा स्वागत किया। मैंने ध्यानसे देखा कोई साठकी उम्र रही होगी। चेहरेपर झुर्रियाँ थीं और आँखोंमें एक तेज रोशनी। सफेद मलमलका कुरता और चुस्त चूड़ीदार पायजामा। चेहरेसे शराफत टपकती थी। कमरेके चारों ओर नजर दौड़ायी। थोड़ेसे झाड़-फानूस, कुछ चित्र, मखमली परदे—मतलब यह कि उनमें नवाबी बू अभी बाकी थी।

'आपकी तारीफ।' नवाब साहबने मेरी ओर इशारा किया।

'आप हैं मेरे दोस्त, अखबार-नवीसी करते हैं।'

'तशरीफ रखिये। अरे बेटी गुलजार पान दे जा।' नवाब साहब मेरी ओर झुके—'आपसे मिलकर बड़ी खुशी हुई। मैं अपनी किस्मतको क्या कहूँ जो घर बैठे ही आप जैसे लोगोंकी कदमबोसी करनेका मौका मिल जाता है।'

मैं नवाब साहबकी जुबानकी मिठासका आनन्द ले रहा था। सतीश मुस्करा रहा था।

'मैं आपकी क्या खातिर करूँ ?'

'आपकी दुआ चाहिये। आपसे मिल लिया यही मेरा सौभाग्य है।'

'क्या बताऊँ भाई। मैं एक बूढ़ा शेर हूँ। बेबसीका जीना भी क्या जीना है। मौतसे बदतर हो रहा है। मेरी जिन्दगी तो खतम हो चुकी है। अब ज्यादा जिलाना अल्लाहकी ज्यादती है।'

'आप इतने मायूस क्यों हो रहे हैं।'

'क्यों न होऊँ। किसी वक्त हाथ उठाकर देता था, जबतक पास था बराबर देता रहा, पर अब हाथ फैलाकर माँगनेमें शर्म आती है। पान लायी बेटी ?'

'पान लाने बाजार भेजा है'—परदेके पास आकर गुलने कहा।

'समझा'—नवाबकी आँखोंसे दो बूँद आँसू टपक पड़े। सतीश तुरत उठा और परदेके पास जाकर उसने गुलको पुकारा, जेबसे निकालकर कुछ दिया। बोला—'बाजारू पान नहीं चाहिये। घरमें लगा हुआ लाना।'

नवाब साहबकी गम्भीर मुख मुद्रा देखकर सतीशने बात बदली—

'हसन कहाँ चला गया ?'

'भैया मुफलिसोंके घर भी कहीं नौकर रहते हैं।'

'कैसी बात करते हैं बड़े साहब, नौकरोंको तो आप मालिककी तरह रखते आये हैं।'

'भाई नौकरको मैं नौकर समझता ही नहीं। मुझमें और उसमें फर्क ही क्या ?'

'आपके खयालोंकी ऊँचाई कौन पा सकता है, नवाब साहब ?'

'नवाब साहबकी बात कहते हो। जब आप अपनी शादीमें गये थे तब आपके साथ १०० नौकर कीमती पोशाक पहने थे, भड़कदार

शेरवानी, चूड़ीदार पायजामा, और आप इसी सादे सफेद कुरतेमें गये थे।'

'अरे भाई मेरी कद्र तो सभी करते, मैं नौशा था। पर मेरे नौकरों-की पूछ कैसे होती। मैं चाहता था उनकी भी खातिर नवाबों जैसी ही हो।'

'आपकी उदारताकी तारीफ करता हूँ।'—मैंने कहा।

'नवाब साहबकी उदारताके एक नहीं हजारों किस्से मैं सुना सकता हूँ अगर तुम अपने अखबारमें छापो।'—सतीशने कहा।

'वाह इसीलिए तो मैं आया हूँ।'

'भाई, क्यों शर्मिन्दा करते हो'—नवाब साहब ने कहा।

'अच्छा सुनो'—नवाब साहब मौन हो गये। सतीशने कहना शुरू किया—

'एक बार नवाब साहब गवरनरसे मिलने जा रहे थे। मौकेके लिए खास शेरवानी सिलायी थी। नवाब साहबका खास नौकर हसन उन्हें पहना रहा था। शेरवानी पहनकर नवाब साहबने पूछा—'

'कैसी है?'

'क्या बड़े मियाँ, मुझे अपन शादीमें यह शेरवानी मँगनी ले जानी पड़ेगी।' नवाब साहब मुस्कराये और शेरवानी उतारकर नौकरको दे दी। दूसरी शेरवानी पहनकर गवरनरके यहाँ गये।

'वाह क्या दिल पाया है नवाब साहब आपने!'—मैंने कहा।

'भाई क्या बताऊँ, जब कोई आदमी किसी चीजकी तारीफ करता है तब उसके दिलके तहमें यह बात छिपी रहती है कि काश यह चीज मेरी होती—और मैं नहीं चाहता कि मेरी किसी चीजको देखकर किसीके दिलमें जरा-सी भी ठेस पहुँचे। मेरी आदत है कि मेरी किसी चीजकी अगर कोई तारीफ करे तो मैं उसे भेंट कर देता हूँ।'

'मैं आपके दरिया दिलकी तारीफ करता हूँ।' मैंने कहा।

'यह आपकी नज़र है।' नवाब साहबने सर झुकाया। सतीशने कहा—

'नवाब साहब अपनी सारी जमींदारी, जायदाद, कमरेकी बहुमूल्य वस्तुएँ, सवारियाँ आदि दोस्तों-मुसाहिबोंको भेंट कर चुके। दिल बचा हो तो आप ले सकते हैं। क्यों ठीक है न बड़े साहब?'

'भाई लोग मेरे पास न जाने क्या सोचकर आते हैं, कितने अरमान लेकर आते हैं, अगर मैं उन्हें खुश न करूँ तो घर जाकर मुझे सैकड़ों गालियाँ देंगे, मेरे ऐश आरामकी चीजोंको देख रश्क करेंगे तो मुझे शान्ति नहीं मिलेगी।'

'क्या आपको अपनी वर्तमान अवस्थामें सन्तोष है?'—मैंने पूछा।

'जी हाँ, सब कुछ लुटाकर भी मुझे सन्तोष है। मैं आरामसे हूँ। जिसका जो था उसे देकर मैं अल्लाहकी इबादत करता हूँ।'

'नवाब साहब आपके दिलकी गहराईकी तह तक कौन पहुँच सकता है।'

'अरे अभी तक पान नहीं लायी! गुल, ओ गुल।' नवाब साहबने कई आवाजें लगायीं। भीतरसे धीमी आवाजमें किसीने कहा—'पान लाने ही तो गये हैं।'

'क्या बात है मैं देखूँ।' सतीश उठकर बाहर चला गया। मैंने देखा नवाब साहबकी मुख-मुद्रा कुछ गंभीर हो गयी। नवाब ध्यानावस्थित नवाबका मैं अध्ययन कर रहा था। इतनेमें सतीश आ गया। नवाब साहबने कुछ नहीं पूछा।

'क्या बात थी'—मैंने पूछा।

'कुछ नहीं'—सतीशने जवाब दिया।

थोड़ी देरमें चाँदीकी तश्तरीमें पान लिए हुए गुल अन्दर आयी। बालिकाकी आँखोंमें आँसूकी बूँदें थीं जैसे अभी-अभी रोयी थी। उसका भोला चेहरा देखकर हृदयकी सारी सहानुभूति जग पड़ी। नवाबके

आदर्शोंके बीच गुलके भविष्यकी एक हलकी रूपरेखा मस्तिष्कने तैयार की। गुलने कहा—'पान लीजिये' तो मैं चौंका। पान खाकर हम लोगोंने नवाब से बिदा ली।

राहमें मैंने सतीशसे पूछा कि गुलको इतनी देर क्यों लगी।

'बात यह हुई कि मैंने जो रुपया दिया था उसे तमोलीने पिछले हिसाबमें जमा कर लिया था। गुलके रोने-गिड़गिड़ानेका भी उसपर असर नहीं हो रहा था। मैं गया तो गुलको पान मिला। समझे!'

मैं नवाबको समझनेकी कोशिश कर रहा था।



'हलो'।

'............'

'मै....अखबारके दफ्तरसे बोल रहा हूँ। आज शामको आपसे मिलना चाहता हूँ।'

'खुशीके साथ आइये।'

निमन्त्रण स्वीकार हो गया। शामको ५ बजे मै शहरके सबसे धनी व्यापारी सेठ करोड़ीमलकी कोठीपर पहुँचा। सेठजीको खबर दी गयी। वह फाटक तक दौड़े आये। सेठजीके उदार व्यवहारसे मै प्रभावित हुआ। मुझे

लेकर वह जिस कमरेमें पहुँचे—वह सेठजीका ड्राइङ्गरूम था। मैंने कमरेके चारों ओर आँखें दौड़ायीं। वैभव-विलासके सारे साधन एकत्र थे। कला और सुरुचिका भी अभाव नहीं था। कमरेके चारों दीवारोंसे टकराकर निगाहें जब लौटीं तो सेठके कौतूहल भरे चेहरेपर जा अँटकीं।

'कहिये कमरा पसन्द आया!'

'बड़ी शाही तबियत पायी है आपने!'

'जी!'

'लखनऊ—दिल्लीके राजघरानोंसे तो आपका सम्बन्ध नहीं रहा?'

'जी नहीं अभी तक तो नहीं पर अब मैं अपनी लड़कीकी शादी एक स्टेटमें करने जा रहा हूँ।'

'तिलक वगैरह ठीक हो गया है?'

'जी हाँ आपकी दयासे रुपयेकी कमी तो है नहीं, मैंने स्टेटका सारा कर्ज चुकानेका वादा कर दिया है। करीब २०—२५ लाख खर्च होंगे।'

'कितनी लड़कियाँ हैं?'

'बस एक ही!'

'तो इतनी बड़ी जायदादका क्या करेंगे?'

'यही तो सोच रहा हूँ।....अभी मेरी कोई खास उमर भी नहीं है।'

'क्या उमर है आपकी?'

'यही करीब पचासके नीचे ही।'

'तो दो-एक शादी तो आप मजेमें कर सकते हैं।'

सोच तो रहा हूँ—पर आप लोगोंसे डर लगता है।'

'डरकी क्या बात शहरके सातों अखबारोंको मुँह माँगे रेटपर साल भरके लिए विज्ञापन दे दीजिये और संस्थाओंका मुँह चन्देसे बन्द कर दीजिये।'

'सो तो करूँगा ही, साथ ही एक कालेज और एक अस्पताल भी खोलनेका इरादा है।'

'फिर क्या है—जी चाहे जितनी शादियाँ कीजिये।'

'आप मजाक तो नहीं कर रहे हैं?'

'शादी और मजाकसे क्या सम्बन्ध! भला इतनी बड़ी जायदाद-का उपभोग करने वाला तो कोई पैदा होना ही चाहिये।'

'अब आप ही बताइये कितने परिश्रमसे मैंने यह धन-सञ्चय किया है। अगर इसका उपभोग करनेवाली सन्तति नहीं है तो फिर मैं ही क्यों न कुछ आनन्द उठाऊँ।'

'ठीक! बहुत दुरुस्त विचार हैं। अवश्य शादी करिये।'

'लड़की ठीक कर ली है मैंने। बी० ए० पास है। अच्छे घरकी है। लड़कीके चाचाके नाम डेढ़ लाख बङ्कमें जमा करना पड़ रहा है। फिर भी डेढ़ लाखमें लड़की सस्ती ही है।

'अच्छा यह बताइये पहले आप अपनी शादी करेंगे या अपनी लड़कीकी?'

'हें-हें-हें! जी, पहले तो लड़कीकी ही करूँगा।'

'अपनी शादीमें मुझे निमंत्रण देना न भूलिएगा।'

'वाह! यह कैसे हो सकता है।'

'अच्छा अब कुछ मतलबकी बात बताइये जिसके लिए मैं खास आपके पास आया था। मैं आपके जीवनका इतिहास जानना चाहता हूँ। आपकी सफलताका रहस्य क्या है?'

'अच्छा!'

'मैं आपको विश्वास दिला देना चाहता हूँ कि इस रहस्योद्घाटनसे आपका कोई अनिष्ट नहीं होगा।'

'आपका मतलब अगर इन्कम टैक्सके कर्मचारी और सरकारी

अधिकारी वर्गसे है तो वह मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकते। मैंने उन्हें एहसानोंके भारके नीचे दबा रखा है।'

'अच्छा!'

'जी हाँ सफल व्यवसायीको पहले नगरके अधिकारी वर्गसे ही मोर्चा लेना पड़ता है। इनकी नकेल मैं सदा अपने हाथमें रखता हूँ। अधिकारियोंके शराबका बिल मैं चुकाता हूँ। उनकी पत्नियोंको साड़ियोंकी आवश्यकता मेरी कपड़ेकी कोठी पूरी करती है। उनके बच्चोंके लिए त्यौहारोंपर खिलौनोंका ढेर लगा देता हूँ। सच तो यह है कि अधिकारी मेरा दिया खाते हैं, पीते हैं, पहनते हैं और मेरी ही गाड़ियोंपर सवारी करते हैं। मेरे बँगले-बगीचोंमें रहते हैं।

'क्या सभी अधिकारी एकसे होते हैं?"

'नहीं कुछको परचाना-फुसलाना भी पड़ता है। नये रङ्गरूटोंको पालतू बनानेमें कठिनाईका सामना करना पड़ता है। पर इस कामके लिए मेरे पास शिक्षित आदमियोंकी अच्छी जमात है। एक एक अधिकारीके लिए मैं अलग-अलग आदमी नियुक्त कर देता हूँ जो दिन रात उनकी खिदमतमें लगे रहते हैं। सच पूछिये तो मेरे व्यवसायका मेरुदण्ड मेरा यह गेस्टापो विभाग ही है। आप कितना वेतन पाते होंगे—१००–१५० रु०। इस कार्यमें निपुण अपने खास-खास आदमियोंको मैं ५००–१००० तक देता हूँ।'

'क्या आपके आदमी सभी विश्वासपात्र हैं?'

'आदमी विश्वासपात्र कभी नहीं होता, उसे बनाना पड़ता है। उसका स्वार्थ जब तक अपने स्वार्थपर आघात नहीं करता तब तक उससे काम लेना ही पड़ता है। एक सौ रुपये वेतनका कर्मचारी अगर २५ रु० अधिक निकाल लेता है, तो मैं कुछ नहीं बोलता।'

'आपने प्रारम्भ कैसे किया था?'

'जैसे कि मेरे सभी स्वजातीय करते हैं। घरसे निकला था तो एक

लोटा साथ था। बिना टिकट सफर कर कलकत्ते पहुँचा। देशके ही आदमीके यहाँ कह-सुनकर नौकरी की। खुले दिमाग और तेज आँख-कान वाला आदमी था। उन्नति करते देर न लगी। १० रु० पर नौकर हुआ था। ५०० रु० मिलने लगे। सेठका खास आदमी बन गया। कोठीका सारा दारोमदार मेरे ही ऊपर था। खरीद-बिक्रीके काममें सिद्धहस्त तो था ही कुछ कोठीके नामके सौदे यदि मुनाफेवाले हुए तो अपने नाम हस्तान्तरित कर लेता। मालिकका काम अच्छी तरह करते हुए भी मैं अच्छी रकम बना लेता था। लाखोंमें संख्या बनते ही कोठीसे अलग होकर अपना काम करने लगा। बाजारमें जमते देर न लगी। फिर क्या था रुपया बरसने लगा। मैं पागल हो गया। इसी आँधीमें एक दाँव बहक गया और मैं आसमानसे नीचे आ गिरा। पूरा देना नहीं चुका पाया। बाजारसे मुँह छुपाना पड़ा। कलकत्ता छोड़कर, आपके प्रान्त में भाग आया।'

'बिना कुछ लिए-दिये ही?'

'यह कैसे हो सकता था।'

'मैं बनियेका बेटा हूँ—मेरे पास उस समय भी पचपन हजारके नोट थे।'

'अच्छा! फिर क्या हुआ?'

'मुझे नये सिरेसे पैर जमाना पड़ा। मिनिस्ट्री अपनी थी। मैंने पचास हजार रुपये सार्वजनिक संस्थाओंको दान दे दिये। प्रान्त भरमें मेरी धूम मच गयी। अखबारोंने सर-आँखोंपर उठा लिया। मैं देश-भक्त बन गया। वेशभूषा पहले ही बदलकर खद्दर पहन लिया था। उपयुक्त वातावरण तैयार होते ही मैंने एक लिमिटेड कम्पनीकी नींव डाल दी। मैनेजिङ्ग डाइरेक्टरकी जगह मेरा नाम था। विज्ञापन और आफिस सङ्गठनके लिए पाँच हजार काफी थे। शेयर बिकते देर न लगी। मिलकी स्थापना हुई। फिर क्या था, एकके बाद दूसरी

तीसरी और आज पूरे पचीस मिलोंकी चेन तैयार हो गयी है। आज आप देख रहे हैं कि मैं क्या हूँ।'

'आपको बनानेमें युद्धका कहाँ तक हाथ रहा है?'

'बहुत कुछ।' सच पूछिये तो मैं महायुद्धकी ही देन हूँ। सरकारी ठेकोंमें जो रकम मैंने पैदाकी है उसका आप अनुमान तक नहीं लगा सकते। बङ्गालके अकालके समय मेरे विभिन्न गोदामोंमें १० लाख टन चावल पड़े थे। कपड़ोंकी मिलोंमें प्रकट आयके अतिरिक्त भीतरी आयका किसी शेयर होल्डरको पता तक नहीं। एक-एक गाँठ कपड़ेपर हजार रुपये तक अतिरिक्त आय हुई है।'

'सरकारी प्रतिबन्धोंसे आपको कोई बाधा नहीं होती।'

'जी नहीं रुपया प्रतिबन्धोंकी सभी दीवारोंको भी लाँघ सकता है। उदाहरणके लिए सूत हीको लीजिये। नगरसे बाहर सूत ले जानेकी मनाही है। पर मेरे सैकड़ों पार्सल रोज कलकत्ते रवाना होते हैं। कलकत्तेकी कोठीसे सूत चोरीसे मलाया भेजे जाते हैं। आपने सुना होगा मलायामें आजकल कपड़ेका अकाल है। वहाँ दसगुने-बीसगुने दामोंपर भी कपड़ा नहीं मिल रहा है। विभिन्न नगरोंमें अकेले सूतके काममें मेरे पाँच सौ आदमी लगे हुए हैं।'

'पर आपको मालूम है कि आपके नगरमें ही कपड़ेका अकाल-सा है। सूत भेजकर क्या आप अन्याय नहीं कर रहे हैं?

'भाई व्यवसायमें न्याय-अन्यायके लिए स्थान नहीं। रुपया पैदा कर लेनेपर इसका प्रायश्चित भी तो हो सकता है। मेरी आँटेकी मिलोंको ही ले लीजिये। आप सोच नहीं सकते कि मैंने इनके साथ क्या-क्या मिलाकर जनताको खिलाया है। मैं बताना नहीं चाहता कि सुनकर आपको अश्रद्धा हो जायगी।'

'नहीं मैं तो आपको बड़ी श्रद्धाकी दृष्टिसे देखता हूँ।'

'यह आपकी महानता है। नहीं तो हमलोग बड़े पापी हैं। नरकमें

भी हमारे लिए स्थान नहीं। कलकत्तेमें जिस समय रोज सैकड़ों भूखों मरते थे उस समय भी मेरे गोदाम चावलसे भरे पड़े थे। पर मैंने ५० हजार रुपया रिलीफ् फण्डमें दान देकर चावलके ५० लाख मुनाफेका प्रायश्चित कर लिया। अब सोच रहा हूँ काशी मथुरा और हरिद्वारमें मन्दिर और धर्मशालाएँ बनवा दूँ।'

'आप समझते हैं मन्दिर और धर्मशालाएँ बनवा देनेसे आपका पाप धुल जायगा?'

सेठजी पास ही पड़े हुए पिस्तौलको हाथमें लेकर देख रहे थे। बोले—

'सोचता तो ऐसा ही हूँ।'

नौकरने सामने चायका सामान लाकर रख दिया। सेठजी कपमें चाय ढालने लगे। मैं पिस्तौल उठाकर परीक्षा करने लगा। देखा तो भरी थी।

'चाय पीजिये।' सेठजीने मेरी ओर प्याली बढ़ायी। मैं सोच रहा था....।

'चाय पीजिये न, क्या सोच रहे हैं?'

'जीमें आता है कि तुम्हें गोली मार दूँ।' मैंने पिस्तौल सामने कर दिया।

सेठजी अवाक रह गये। मस्तकपर पसीना आ गया।

पिस्तौल गद्दीपर फेंककर मैं तुरत कोठीके बाहर निकल आया।



भगवान शंकरसे इन्टरव्यू

विश्वनाथ-मन्दिरमें हरिजन प्रवेश करना चाहते हैं।

महादेवजीने घबड़ाकर भैयाजीको बुलाया।

पूछा—'क्यों भाई, ये हरिजन क्या चाहते हैं ?'

'आपका दर्शन महाराज'।

'मुझे तो बताया गया है कि वे मेरा मन्दिर अपवित्र करना चाहते है ?'

'यदि भक्तके दर्शनसे आपका मन्दिर अपवित्र होता हो तो कहिये मना कर दूं।'

'नहीं-नहीं, दर्शनपर कैसे रोक लगायी जा सकती है ?'

'लेकिन महाराज आपके प्रबन्धक तो आपको जङ्गलेमें बन्द करने जा रहे हैं ?'

'क्या कहा मुझे बन्दी बनाना पड़ेगा ।'

'हाँ महाराज—महापण्डितोंकी ऐसी ही व्यवस्था है ?'

'मुझसे तो किसीने पूछा नहीं । लगता है मैं पहलेसे ही बन्दी हूँ । एक बात है जङ्गलसे थोड़ा आराम तो मिलेगा । दर्शनार्थी भक्त गङ्गाजलसे नहलाते-नहलाते मेरे सरपर लोटा तक पटक देते थे । जो आता था मस्तक सहलाकर चला जाता था । बासी फूलोंकी सड़ाँधसे नाक फटी जाती थी ।'

'महाराज, आप तो काशीके राजा हैं । आपके चेले आपके कहनेमें नहीं तो नन्दीको ही कह दीजिये द्वारपर खड़ा रहा करे ।''

'क्या करूँ भाई, भङ्ग-धतूरेके बाद केवल गङ्गाजलसे स्नानमें ही शान्ति मिलती है । घण्टेके नादसे मेरी निद्रा भङ्ग होती है । कल चेलोंने मेरा भङ्गका राशन नहीं दिया और बताया कि औरङ्गजेब नया जन्म ग्रहणकर नये तरीकेसे मन्दिर भ्रष्ट करना चाहता है ।'

'यह किसने कहा महाराज ?'

'याद नहीं किस चेले स्वामीने कहा ?'

'आप अन्तर्यामी होकर भी ऐसी बात कहते हैं । आपको पता है भारत स्वतन्त्र हो चुका है । किस दुराग्रहीका साहस कि आपके मन्दिरकी ओर आँख उठाये । आप निश्चिन्त रहें । हाँ, हरिजनोंके दर्शनपर तो आपको आपत्ति नहीं ।'

'दर्शन तो भक्तका जन्मसिद्ध अधिकार है । मैं भी नहीं रोक सकता । फिर हरिजन को ?'

'महाराज ये नये हरिजन हैं ।'

'नये हरिजन कैसे ?'

'महात्मा गाँधीको आप जानते हैं ?'

'हाँ, वह तो मेरा बड़ा भक्त था। मैं उसका आदर करता हूँ।'

'उन्हीं महात्माका दिया हुआ नाम है हरिजन—वास्तवमें ये आपके शिष्यों द्वारा अस्पृश्य समझे जानेवाले डोम, चमार, मेहतर, भङ्गी आदि हैं।'

'क्या कहा अस्पृश्य ? भूत, प्रेत, बैताल, पिशाच, डाकिनी, शाकिनी, योगिनी, भैरवी आदि जब मेरे दरबारमें स्थान पा सकती हैं तो मेहतर भङ्गी तो मानवसेवक हैं। इन्हें कौन रोकता है ?'

'महाराज, आपके कथित शिष्य।'

'काशीमें यह अनाचार ! असम्भव है। मेरे दर्शनपर प्रतिबन्ध नहीं लग सकता।'

महादेवका क्रुद्ध रूप देखकर डमरू डिमडिमा उठा। नन्दी खड़-बड़ाकर उठ खड़ा हुआ। पूछा—

'क्या आज्ञा है महाराज ?'

'देख तो मेरे पास आनेवाले भक्तोंको राहमें कौन रोकता है ?'

कुछ देर बाद लौटकर नन्दीने बताया—

'महाराज कुछ गेरुआ वस्त्रधारी प्रवेशद्वार रोके हुए हैं। बाहर हरिजन-भक्त आपकी जयके नारे लगा रहे हैं।'

'शिवको अशिव बनानेवाले मूर्ख ! कहाँ है मेरा त्रिशूल ? तू द्वारपर चल मैं आता हूँ।'

नन्दी बाहर गया। तो मैंने कहा—

'महाराज आप न जाइये। मैं आपके भक्तोंको समझा देता हूँ।'

इतनेमें नन्दी वापस आ गया, बोला—

'महाराज, हरिजन-भक्त वापस लौट गये।'

'क्यों ?'

'प्रवेशद्वारमें लेटे हुए मानवको कुचलकर वह आपका दर्शन करना नहीं चाहते ।'

'मेरी नगरी, मेरे दरबारमें यह सब कुछ हो रहा है और मुझे पता नहीं । काशी अब मेरे रहने योग्य नहीं रह गयी है । नन्दी मैं कैलास वापस जाना चाहता हूँ ।'

'नहीं, महाराज ऐसा न कीजिये । एकके अपराधपर हम सबको क्यों दण्ड दे रहे हैं ।'—नन्दीने भी मेरी प्रार्थनाका अनुमोदन किया ।

शिवका क्रोध शान्त हुआ । गङ्गाजल पानके बाद बोले—नन्दी मेरी शक्तिसे तू परिचित है । जा बाहर सूचित कर दे कि शिवको रुष्ट करनेका दुस्साहस कोई न करे ।

नन्दीके जानेके बाद मैंने भी चलनेका उपक्रम किया तो महादेव बोले—

'देख, मेरे मूर्ख शिष्योंको तू जाकर समझा दे कि शिवको विश्वकी कोई शक्ति अपवित्र नहीं कर सकती । जो मेरे भक्तोंको दर्शनसे रोकते हैं, वे मेरे निन्दक हैं—शत्रु हैं ।'

'अच्छा महाराज ।'

मैंने महादेवको प्रणामकर विदा ली ।

प्रातः नींद खुली तो देखता हूँ 'आज' अखबारके प्रथम पृष्ठपर समाचार—'विश्वनाथ-मन्दिरमें हरिजन प्रवेश ।'

यदि मैं कार्टूनिस्ट होता



मेरे परम मित्र डाक्टर मनुजी आदमजी एम० ए० पी० एच० डी० ने जिस दिनसे मुझे डारविन सिद्धान्तका खुलासा समझाया और यह बताया कि मनुष्यके पूर्व-पुरुष बन्दर थे, उस दिनसे मुझे अपने मित्रों, मुलाकातियों, मिलने-जुलनेवालोंके चेहरोंमें किसी न किसी पशुका दर्शन होता है। लगता है जैसे डारविन साहब मेरे दिमागके बँगलेमें विराजमान हों और प्रत्येक व्यक्तिके पूर्व-पुरुषोंका इतिहास बतलाते जाते हों। वैसे मेरा दिमाग सही है और आँखें भी

दुरुस्त ही हैं। मैं चश्मा नहीं लगाता इसलिए किसी चीजको बिना परदेके देख सकता हूँ। भ्रम या गलतफहमीकी गुञ्जाइश नहीं। मेरा दृष्टिकोण आपको पसन्द न आये पर यह सही दृष्टिकोण है, ऐसा मेरा विचार है।

आदमीका चेहरा अध्ययनकी वस्तु है। आप अपना चेहरा शीशेमें देखते हैं तो आपका असली चेहरा आपको नहीं दिखाई देता। अपना चेहरा देखते ही आप मुँह बनाने लगते हैं। यही आदत बन्दरोंमें भी पायी जाती है। विश्वास न हो तो किसी बन्दरको शीशा दिखाकर देखिये। कहनेका मतलब यह कि मुँह बनाना, मुंह बिचकाना, मुँह चिढ़ाना आदि गुण-दुर्गुण आदमीने बन्दरोंसे पाया। नकल, अनुकरणकी आदत भी बन्दरोंकी स्वाभाविक देन है।

मनुष्यके चेहरे और स्वभावमें एक नहीं एक हजार एक ऐसी बातें मिलेंगी कि अन्तमे आपको मानना पड़ेगा कि आपके पूर्वपुरुष बन्दर थे—बन्दर नहीं तो कोई न कोई जानवर अवश्य थे!

अभी मैंने शीशेका जिक्र करते हुए कहा था कि शीशेमें आपको अपना असली चेहरा नहीं, वह चेहरा दिखाई देता है जो आप देखना चाहते हैं। आदमीकी यह दिमागी कमजोरी, आत्मविश्वासका अभाव भी बन्दर युगकी याद दिलाता है जब आदिम मानव पानीमें अपना प्रतिबिम्ब पहली बार देखकर झल्ला उठा था। आपका चेहरा आज आदिम मानवसे बहुत कुछ भिन्न हो गया है। सभ्यताके आधुनिकतम साधनोंने आदिम मानवके कुरूप भयावने चेहरेको भी सुन्दर आकर्षक बना दिया है। रूप बदल गया, वेशभूषा बदल गयी है, पर ढाँचा और आकृतिको तो आप नहीं बदल सकते। यह शरीर और आकृति तो अल्लामियाँ और आपके पूर्वपुरुषोंकी देन है। आपका चेहरा आदिम युगका स्मारक है, अवशेष है। आप अपना चेहरा, असली चेहरा

ठीक-ठीक नहीं देख पाते इसलिए मैं जो देख रहा हूँ, मैं जो कह रहा हूँ—वही सही है इसे आपको मान लेना चाहिये।

डारविन सिद्धान्तका प्रथम पाठ पढ़नेके बाद जब मैंने अपने मित्रको ध्यानसे देखा तो पता चला कि डारविन ठीक कहता है। आप मेरे मित्र डाक्टर मनुजी आदमजीको देखें तो आप भी डारविन-सिद्धान्तके समर्थन बन जायँगे।

मेरे मित्रके पूर्वपुरुष अवश्य कभी अफ्रीकासे आकर भारतमें बस गये होंगे। भारतमें इस प्रकारकी मुखाकृतिके जीवोंका पता नहीं लग सका है। मनुजी अपने पूर्वपुरुषोंके जन्मस्थानकी खोजमें अफ्रीका यात्रा करनेवाले हैं। *वहाँसे लौटनेपर हम आपको मनुजीका पारिवारिक* रहस्य बता सकेंगे। तबतकके लिए आप हमारे मित्रको भारतका ही राष्ट्रीय नागरिक मान सकते हैं।

आदमी नजदीकसे देखनेपर जानवर मालूम होता है। आदमीकी पाशविक प्रवृत्तियाँ, जङ्गली रूप निकट दर्शन और अध्ययनके बाद ही मालूम होता है। पर कभी-कभी धोखा खाना पड़ता है। मेरे मित्र आदमजीको ही लीजिये। चेहरेसे आप अफ्रीकाके वनमानुष कोटिके जीव मालूम होते हैं पर आप दर्शन-शास्त्रके प्रकाण्ड पण्डित हैं। इसीलिए आदमजी मुझसे कहते हैं कि चेहरेपर न जाइये। पर आदमीके अध्ययन और मानव आकृतियोंके सूक्ष्म निरीक्षणमें मुझे मजा आने लगा है, इसलिए मित्रका अनुरोध भी मेरे अध्ययन-अन्वेषणको न रोक सका। ज्ञान-प्राप्ति और रहस्यान्वेषणके आत्मिक आनन्द और स्वानुभूति सुखमें आप चाहें तो भाग ले सकते हैं। मानव-शरीर रचनाकी दिशामें यदि थोड़ा भी झुकाव हो तो आप मेरे चित्रसंग्रहको देखकर उछल पड़ेंगे। ये चेहरे जिनका चित्र आप मेरे अलबममें देखेंगे आपको राह-बाट, सड़क, घाटपर चलते-फिरते दिखाई देते हैं पर कभी आपने ध्यान नहीं दिया। आपने अपने चेहरेका भी

क्या कभी सूक्ष्म निरीक्षण किया है ? यदि नहीं तो आज ही एकान्तमें बैठकर दर्पणमें देखिये। अवश्य किसी न किसी पशुका सादृश्य आपको देखनेको मिलेगा। पर सत्य दर्शनके लिए निष्पक्ष दृष्टिकोण, चश्मा रहित स्वच्छ दृष्टिकी आवश्यकता होती है।

आपसे मिलिये। ये हैं प्रोफेसर बकरे। लड़के आपकी दाढ़ीका मजाक उड़ाते हुए 'बकर-मुख' कहते हैं पर आपकी दाढ़ी आपके व्यक्तित्वकी जान है। दाढ़ी देखनेसे ही पता चलता है कि आप वाम-पन्थी हैं। आपकी बङ्किम दाढ़ी और कूटनीतिक आँख साफ बताती है कि आप कम्युनिस्ट हैं। राजनीति पढ़ाते हैं और सिखाते हैं। आपके लम्बे कान आपकी ग्राहक शक्तिके परिचायक हैं। प्रोफेसर बकरेका राजनीतिपर लेक्चर सुनकर लड़के बकरेकी बोली बोलते हैं। इसमें प्रोफेसरका क्या दोष! प्रोफेसर साहब यह माननेको तैयार नहीं कि उनके पूर्वपुरुष कभी बकरे थे। बकरेका सादृश्य वह केवल आकस्मिक मानते हैं।

आपको पहचानते हैं ? आप हैं मण्डूक मिश्र। युग बदल गया। जमाना पलट गया। सतयुग-त्रेता-द्वापरके बाद अब कलियुग आ गया विशुद्ध घीके यज्ञसे वनस्पति यज्ञका युग आ गया पर आपकी रूपरेखा, आपके विचार, आपका चेहरा नहीं बदला, नहीं बदला। दादुरसे आपने केवल स्वर और शरीर-सादृश्य ही नहीं स्वभाव भी लिया है। नया आदमी, नया प्रकाश देखते ही आप पुनः कूपमण्डूक बन जाते हैं। मुँहकी दाढ़में मालपूआ और हलुआ और तोंदमें लड्डूके ढेर समा जाते हैं। इसका कोई हिसाब-किताब नहीं रखते। सनातनसे एक स्वर, एक वेश, एक अपरिवर्तनशील व्यक्तित्वकी रक्षा करनेवाले मण्डूक मिश्रको नमस्कार करिये।

आपसे मिलिये। आप हैं श्री वृषभप्रसाद शर्मा। पिछले चुनावमें भारी बहुमतसे विजयी हुए हैं। लोगोंने आपका चेहरा देखकर नहीं

सींगोंके डरके मारे आपको वोट दिया। चेहरा आपका बैलसे मिलता-जुलता है इसलिए आप कांग्रेसके प्रतीककी तरह चुन लिये गये। वैसे आप निरे बैल नहीं। सानी-भूसा, हरी घास देख इतना लम्बा मुँह मारते हैं कि डकार तक नहीं लेते। मौका पाकर चूकते नहीं। पीठ पीछे लोग भले ही गाली दें पर सामना पड़नेपर लोग भयसे पीछे हट जाते हैं। आपके दोनों सींगोंके बीच गाँधी टोपी बड़ी फिट होती है।

आपसे परिचय नहीं है क्या? आप हैं श्री अश्वमुख। मध्यवर्गके प्रमुख भारवाहक। दफ्तरके बाबू हैं। कुछ लोग घोड़मुँहाँ भी कह लेते हैं पर आपकी पीठपर कितना ही भार हो, कोई कितनी ही गालियाँ दे आप चूँ तक नहीं करते। पिसते-पिसते आदत पड़ गयी है लादी ढोने की। और कोई काम भी कर सकते हैं इसमें सन्देह है। दो-चार रुपये घूसकी आमदनीको ही जीवनका चरम लक्ष्य बनाकर जिन्दगीका सफर फाइलोंके नीचे, चश्मेकी रोशनीमें काट देते हैं। चश्मेसे छनकर आनेवाली आँखकी चमक चवन्नी घूसकी है या लेडी टाइपिस्टकी मुस्कानका जवाब—यह नहीं कहा जा सकता। अश्वमुखकी सबसे बड़ी विशेषता है हिनहिनाना। इस क्रियासे बड़े-बड़े अफसर कभी रुष्ट नहीं होते। अश्वमुखके साथ आप यदि कुछ घण्टे रह जायँ तो 'हें हें' करने लग जायँगे।

लीजिये मिस्टर उष्ट्रसे हाथ मिलाइये। आई० सी० एस० बिरादरीके प्रमुख सदस्य हैं। पहले गौराङ्ग महाप्रभुकी जय मनाते थे अब गाँधी टोपीकी जय कहते हैं। गुलामी हो या आजादी, ऊँटकी वही पुरानी चाल। साहब जरा भी नहीं बदला। क्लबमें बैठकर पागुर करनेकी आदत अभी नहीं छूटी। ह्विस्कीके पेगके बाद लौंग स्मोक और उसके बाद 'डैम नेहरू' 'डैम पटेल'के प्रवचन आज भी उष्ट्र क्लबोंमें सुने जा सकते हैं। साहब बहादुरको पता नहीं कि पटेल उनकी शब्दध्वनिकी

पहुँचके बाहर पहुँच चुके हैं और नेहरू ऐसी बातें सुनकर भी अनसुनी कर देते हैं।

श्री सफेदा लखनवीसे मिलिये। आपका चेहरा बनारसी लँगड़ेसे मिलता है पर आपकी पैदाइश लखनऊमें होनेके कारण लखनवी मिट्टीकी तासीर है। शायरीमें सफेदाकी बराबरी कटहल गोरखपुरी और खरबूजा जौनपुरी भी नहीं कर सकते। सफेदा साहबका चेहरा आपको भले ही ऊटपटाँग लगे पर खुद सफेदाजी अपना चेहरा साहित्यिक सौन्दर्यका मौलिक नमूना मानते हैं। आपने ऐसा बढ़िया नमूना शायद ही कहीं देखा हो। आदाब अर्ज है। शायरी फिर कभी सुनियेगा।

गर्दभमुखका नाम तो सुना होगा। अब आपकी सूरत भी देख लीजिये। आपका चेहरा गधेकी तरह गुरु-गम्भीर है। आप प्रयोगवादी कवि हैं। विचारोंकी लादी, आपके मस्तकको बराबर नत रखता है। आपकी मुखाकृति वैसे भी गम्भीर बनी है। जीवन समुद्रमें निराशाकी लहरोंके थपेड़ोंने आपके मुँहको तोबड़ा बना दिया है। आँखोंके सामने सूर्यका प्रकाश होते हुए भी अन्धेरा छाया रहता है और आप छायाको पकड़ने दौड़ जाते हैं। आपका कण्ठ जब फूटता है तो उसमें से केवल कविता निकलती है।

और आपसे मुलाकात तो जरूर ही हुई होगी। कहीं भी सभा, गोष्ठी, बैठक हो, पितरोंका श्राद्ध हो, बरहीका उत्सव हो। आप जरूर बुलाये जायँगे। आप हैं पत्रकार श्री कुक्कुरजी। समाचार सूँघते-सूँघते सर्वत्र पहुँच जाते हैं। पर कहीं आपका पेट नहीं भरता। पेटकी चिन्तासे आपकी हुलिया पत्तलचाट बन रही है। वैसे आदमी ईमानदार हैं। जिसकी खाते हैं उसकी ओरसे भौंकते हैं। कोई समाचार छपाना हो तो इनसे जरूर मिल लें। स्वभावसे बड़े मिलनसार हैं।

मेरे चित्र-संग्रहकी अन्तिम तसवीरें महिलाओं की हैं। ये हैं ककड़ी

देवी। आपका शरीर लखनऊकी ककड़ीको चुनौती देता है। आप चलती हैं तो लगता है कोई स्प्रिंगदार प्लास्टिकका खिलौना झूला झूल रहा है। सामाजिक उत्सवोंमें आपकी कोमलताका, इकहरे बदनका, बल खानेवाली कमरका बड़ा बखान होता है। आप अपनी प्रशंसा सुनकर फूलती नहीं, शर्मसे सिकुड़ जाती हैं। यह आपकी सबसे बड़ी विशेषता है।

आप हैं सुश्री टमाटरी। टमाटरकी तरह गोल, टमाटरकी तरह लाल चेहरा देखकर कौन रसिक कवि आपका नाम लेकर पुकार न उठेगा। आपका द्वितीय नामकरण आपके काव्यगुरुने किया था जब आपने पिङ्गलकी पहली पुस्तक समाप्त कर काव्याभ्यास प्रारम्भ किया था। आपके गीत टमाटरकी तरह ही रसदार होते हैं। आप जब कवि-सम्मेलनोंमें सस्वर कविता पाठ करती हैं तो शुष्कहृदय श्रोता भी हाथ मलने या ताली पीटने लगते हैं। सुश्री टमाटरीका पहला गीतसंग्रह 'टमाटर कोपता' प्रेस में है।

श्रीमती आमलेटसे मिलिये। आपका निर्दोष अण्डाकार चेहरा देखकर किसी मूर्ख अभिभावकने आपका नामकरण किया होगा। कालेजकी सौन्दर्य प्रतियोगिताओंको जीत आप सिनेमाके दर्शकोंका हृदय जीतने बम्बई गयी हैं। आपका चेहरा अबतक अनगिनत हृदयपटपर प्रकाशित हो उठा है तो सिनेमाके परदेपर भी अवश्य ही प्रकाशित होगा। आपके पिता पोल्ट्री फार्मके मालिक थे इसलिए आपके अण्डाकार चेहरेका उचित मूल्याङ्कन न कर सके। कुछ भी हो हम आपकी सफलता चाहते हैं।

अन्तमें मिस मक्खीसे मिलिये। आप सभ्य समाजकी जान हैं। आपके बिना कोई भी पार्टी, दावत, बैठक, गोष्ठी सूनी रहती है। दानेदार बदन जार्जेटकी साड़ीसे आच्छादित होनेपर भी अङ्गप्रदर्शनकी

छूट देता है। फैशन, और वेशभूषाके क्षेत्रमें तो नारी समाज आपको आदर्श मानकर चलता है।

वैसे तो चेहरोंकी कमी नहीं—हजारों मिलेंगे। पर ये नमूने असाधारण हैं। यदि मैं कार्टूनिस्ट होता तो मानव चेहरेके इन महान् नमूनोंको तूलिकासे अङ्कितकर अमर कर देता। मेरी असमर्थता और विवशता इन चेहरोंको चित्रितकर मेरे सहयोगी कलाकारने दूर कर दी है।

(विशेष—डा० मनुजी आदमजीके साथ मानव आकृति विज्ञानपर मैंने जो खोज की है उसे जानकर संसार आश्चर्यचकित रह जायगा। वर्षोंके परिश्रम, अध्यवसाय और अध्ययनके पश्चात् हम इस निष्कर्षपर पहुँचे हैं कि मनुष्य फिरसे पशु युगकी ओर लौट रहा है। आदमीका चेहरा बदल रहा है। पशुओंके लक्षण स्पष्ट हो रहे हैं। आगामी पाँच हजार वर्षोंके अन्दर ही आजका सभ्य मानव पूरा पशु रूपमें बदल जायगा। हमारा रिसर्च अभी समाप्त नहीं हुआ है। सन २००० तक रिसर्च समाप्त हो गया तो पाठकोंके सम्मुख उपस्थित करूँगा।—लेखक)



अनोखेलाल नटनागर

अनोखेलाल नटनागरके क्रांतिकारी स्वरूपसे तो आप परिचित ही हैं। अनोखेलालने नटनागरकी तरह नाना रूप बदले, रङ्ग बदले, वेश बदले, पेशे बदले और साइनबोर्ड बदले। नामक्रांतिकी, नेतागिरीकी, चुनाव लड़े पर कुछ पल्ले न पड़ा। आध्यात्मिकता जागी, भजन कीर्तन किया, पर मानसिक शांति न मिली। सहस्रनाम जपसे भी उन्हें संतोष न हुआ। गर्दभज्ञानकी कोरी आध्यात्मिकतासे उनका दुख दर्द न गया, उनके मनका कचोट न मिटा।

पेटके लिए कोई धंधा चाहिये, मस्तिष्कके लिए वाद-विवाद चाहिये पर दिलकी, आत्माकी तुष्टिके लिए नारीका प्रेम चाहिये। हमारे चरित-नायक लाला अनोखेलाल नटनागर भी प्रेमाभावसे पीड़ित थे।

राजनीतिसे विरक्ति हुई तो नटनागरजीने भजन कीर्तनमें मन रमाया था, पर अब भजन-कीर्तनसे भी मन उचटा तो नटनागरजी किधर जायँ। जिन्दगीके चौराहेपर वैठे सोच रहे थे। नटनागरजीको नयी दिशाका निर्देश करनेके पूर्व आपका प्रश्न उचित ही होगा कि अनासक्तिसे विरक्तिका भाव कैसे उदय हुआ। आपकी शङ्काका समाधान होना ही चाहिये। नटनागरजीका इस प्रश्नपर मौन शङ्काका शमन नहीं उत्तेजन करता है। लगता है कहीं दालमें कुछ काला है। नटनागरजी भले ही न बतायें पर पता लगानेवाले लगा ही लेते हैं। खैर, खून, खाँसी, खुशी और इश्क कहीं छिपाये छिपता है? आखिर पता चल ही गया। आपकी उत्सुकता भी छिपाये नहीं छिप रही है तो सुनिये—

अनोखेलाल नटनागरने अपना नया केंचुल बदला और कर्तनियासे कीर्त्तनिया बन गये; तभी महल्लेके जवान छोकरोंके कान खड़े हो गये थे। धरमका मामला था, वेचारे कुछ बोल नहीं पाते थे, पर नटनागर-जीकी गतिविधिपर ध्यान लगाये हुए थे। इधर नटनागरजी भक्तिभावमें ऐसे लीन हो रहे थे कि 'मूँदहु आँख कतहुँ कोउ नाहीं।' अखंड-कीर्तन-का दौर बढ़ रहा था। रातभर धमार और प्रातः भैरवी नित्यका क्रम बन गया था। महल्लेवालोंको नींद हराम हो गयी थी। नटनागरजीने अपने मकानेके चारों ओर लाउडस्पीकर लगा रखे थे। पड़ोसी अपने बिस्तरमें रघुपति राघव राजारामके कीर्तनके साथ नटनागरजीके पूर्वजोंका श्राद्ध भी करते चलते थे। चौबीस घंटे अखंड कीर्तनकी अखंडता बढ़ी तो महीनेभरकी हो गयी। कीर्तनकी अखंडता अगर बीचमें ही खंडित न हो जाती तो शायद नटनागरजी पूरे ३६५ दिन बाद जाकर साँस लेते।

तो खास बात तो कहनेको रह ही गयी। यह तो आप सभी जानते

हैं कि आजके युगमें आस्तिकता केवल स्त्रियोंमें शेष रह गयी है। पुरुषों-को धोखा-धड़ी, चोरी-डकैती, चुनाव-राजनीतिसे कहाँ फुर्सत कि भजन कीर्तन करे। सो यह शान्तिस्थापन, प्राणियोंमें सद्भावना प्रसार नरकमें जानेवाले प्राणियोंके लिए सहायता कार्यका भार केवल स्त्रियोंके ऊपर आ गया है। जहाँ कहीं धर्मकी जयका घण्टा बजा कि स्त्रियाँ शहदकी मक्खीकी तरह एकत्र हुईं। फिर नटनागरजीके कीर्तनमें यदि स्त्रियोंकी संख्या अधिक होती थी तो किसीको आश्चर्य या आपत्ति नहीं होनी चाहिये।

अपने चारों ओर स्त्रियोंका क्षीरसागर देखकर नटनागरजी आनन्द मगन हो जाते और कीर्तनके बीच-बीचमें उठकर नाचने लगते। नट-नागरजीने नृत्य किसी उस्तादसे नहीं सीखा था। यह तो प्रकृति प्रदत्त प्रतिभा आपसे आप फूट पड़ी थी। देखनेवाले चकित रह जाते। फिर कत्थक हो या कथाकली, लास्य हो या ताण्डव नटनागरजी ताल-बेतालकी चिन्ता छोड़ जिस समय टपाटप नाचने लगते तो ऐसा लगता कि जैसे कोई गहरेबाज घोड़ा सीमेण्टकी सड़कपर दौड़ा जा रहा है। कन्धेतक लहराते हुए केश, श्यामला रङ्ग बिलकुल नटवर नागर कृष्णकी छवि चेहरेपर उतर आती। कृष्णजी अकेले ही नाचें यह कैसे हो सकता था। साथमें राधा तो होनी ही चाहिये। भगतिनोंकी भीड़में नटनागरजीकी डीठ एक गोरी चिट्टी गदर अनारसी सेठानीपर जा धँसी। सेठानी नियम-पूर्वक नित्य कीर्तनमें सम्मिलित होतीं। वेषभूषासे सम्पन्न मालूम होती थी। रोज एक दोना कलाकंद और एक टोकरी फलफूल लेकर आती। नटनागरजी प्रसादके रूपमें उन्हें एक केला देकर बाकी अर्धरात्रिके नाश्तेके लिए रख लेते। सेठानी भगतिनोंकी शिरोमणि थी। आने और जानेके वक्त श्रद्धापूर्वक नटनागरजीके चरण स्पर्श करती। नटनागरजी आशीर्वाद देते 'सौभाग्यवती भव'। सेठानीने एक दिन कीर्तनके बाद रुककर नटनागरजीसे प्रार्थना की कि महाराज मैं विधवा हूँ, आप मुझे गलत आशीर्वाद देकर पथभ्रष्ट न करें। नटनागरजीने सेठानीके सरपर

हाथ फेरते हुए कहा....देवी तेरा सौभाग्य अमर है। तू अचल सौभाग्यवती है और सदा बनी रहेगी। नटवर नटनागरकी दृष्टिमें कोई भेदभाव नहीं रहता। वह समदर्शी हैं। सबको समान भावसे देखते हैं। बेचारी सेठानी नटनागरजीका प्रवचन सुनकर सन्तुष्ट हो चली गयी। दूसरे दिन नटनागरजी एक कदम आगे बढ़े। कीर्तन और नृत्य करते-करते सेठानीके पास आकर बोले—देवी कल नटवर नागर कृष्णने मुझे एक बड़ा विचित्र सपना दिया। भगतिन सेठानीने उत्सुकतासे पूछा—'सपनेमें क्या कहा महाराज ?'

'कृष्णजी बोले कि तेरा एकाकी नृत्य मुझे पसन्द नहीं। अधूरा नृत्य मत किया कर। कुछ समझी ?'

'हाँ महाराज।'

'तो फिर बताओ राधाजी कहाँसे आयेंगी ?' सब मौन थे।

'देवी तू मेरा धर्मसंकट टाल सकती है। बोल बचन देती है।'

'जैसी आज्ञा महाराज।'

'तो तू आजसे नटवर नागरकी राधा बनेगी। अब तो भगवान् मेरे कीर्तनसे सन्तुष्ट होंगे। क्यों भक्तो ?'

'जी महाराज !' सब एक स्वर बोल उठे।

सेठानीको हाथ पकड़कर नटनागरजीने खड़ी कर दिया। दोनों हाथोंमें झाँझ थमा दिये और कीर्तन द्रुतपर शुरू हुआ। नटनागरजी इधर-उधरसे नाचकर राधाजीके कन्धेपर हाथ रख देते। राधाजी लज्जित हो नतमस्तक हो जातीं। उस दिनसे कीर्तन जमने लगा। भीड़ पहलेसे दूनी होने लगी। पूजा और भेंटकी आय भी सेठकी तोंदकी तरह बढ़ने लगी।

कीर्तन नृत्यमें नटनागरजी और राधाजीका द्वैत धीरे-धीरे अद्वैतमें परिणत होने लगा। भक्त और भगतिनें कीर्तनके बीच-बीचमें नटनागर और राधाजीकी रासलीलाका दृश्य देखकर रोमाञ्चित हो उठती थीं।

सदाकी भाँति उस दिन भी कीर्तन चल रहा था। राधा-नाटनागरका अद्वैत नृत्य गतिशील था। नटनागरजीका भावावेश बढ़ा तो शुद्धाद्वैतकी स्थापनाके लिए लालायित हो उठे और परदे के पीछे चले गये। इसीके परिणामस्वरूप दूसरे दिन प्रातःकाल उठते ही नटनागरजीने देखा कि मुहल्ले वालोंका रुख खराब है। सभी उन्हें असांस्कृतिक शब्दावलीमें स्मरण करते हुए मुहल्ला छोड़नेकी धमकी दे रहे थे। थोड़ी देरमें ही दरवाजेपर अच्छी खासी भीड़ एकत्र हो गयी। भीड़में राधाका रूप धारण करनेवाली सेठानीके घरके आदमी थे। दर्जनों लाठियाँ जुट गयी थीं। सभीका एकमात्र लक्ष्य नटनागरजीकी खोपड़ी थी। खोपड़ी निर्दोष थी ऐसा नटनागरजी समझते थे। पर दरवाजेके बाहर खड़ी भीड़को समझानेका साहस न हुआ। नटनागरजीने मस्तिष्ककी सारी बुद्धि बटोरकर सोचा और तुरत मकानके पिछवाड़ेके द्वारसे बाहर निकल गये। दुःख तो हुआ मकान छोड़नेका पर दूसरा कोई चारा नहीं था। मुहल्लेवालोंने नटनागरजीको मुहल्लेके बाहर खदेड़कर ही दम लिया। 'किस्मतकी बदनसीबी कि टूटी कहाँ कमन्द....दो-चार हाथ जब कि लबे बाम रह गया।'

नटनागरजीके साथ हम लोगों की, सबकी सहानुभूति होनी चाहिये। जिन्दगीभर असफलता और निराशाके पालनेमें बेचारे झूला झूले, प्रयोगवादी कविताकी तरह जीवनमें नये-नये प्रयोग किये, उर्दू शायरीके आशिककी तरह हर गलीमें धक्के खाये, नयी दिल्लीकी पुरानी अधेड़ पत्नीकी तरह सर्वदा उनका स्वागत घृणा, व्यंग्य, अपेक्षा और अपमानसे ही हुआ। एक साधारण भुनगा भी आजकी इस मानपूर्ण समतावादी धरतीपर इतना अपमान नहीं सहन कर सकता था फिर नटनागरजी तो जानदार जीव थे। प्रतिक्रिया स्वभाविक ही थी। अपनी असफलता, विफलता- अकर्मण्यता, नगण्यता और नपुंसकतापर उन्हें रोना हो आया। पश्चात्ताप और क्षोभकी अग्निमें वह जल रहे थे! प्रतिक्रियाकी दावाग्नि सुलग रही थी। नटनागरजी ने आत्म-हत्याकर लेनेका निश्चय कर लिया

था। वह अपने निश्चयपर अटल थे। क्रूर नियतिने उनको अपने व्यङ्गका निशाना बना लिया था। आज नटनागरजी भी नियतिको अपना अन्तिम जवाब देंगे।

नटनागरजी कैसे भी क्यों न हों उन्हें भी जीनेका अधिकार था, पर समाजने उन्हें कोई सहारा नहीं दिया। उनकी भी आकांक्षा थी कि सिनेमा स्टारसे मिलती-जुलती एक खूबसूरत पत्नीके साथ एक छोटे पहाड़ी बँगलेमें हँसी खुशीसे जिन्दगी बिताते, पोर्टिकोमें कार खड़ी होती, बैंकमें बैलेंस होता, पर यह सपना सपना बना रहा। नटनागरजीका कोई अपना न बन सका। जिन्दगी दूभर हो गयी, जीवन भार बन गया। बेचारे नटनागरजी अपने हृदयका बोझा ढोते-ढोते थक गये....कोई भार सँभालनेवाला न मिला, बोझा हलका करनेवाला न मिला। नटनागरजीने आत्म-हत्याके विचारपर गम्भीर चिन्तन किया, मनन किया और अन्तमें निश्चय किया कि आत्म-हत्या करनी ही पड़ेगी। आत्म-हत्याके लिए बहाना ढूँढ़ना नहीं था। एक हजार एक कारण थे। विचारणीय केवल यही था कि आत्म-हत्याके लिए कौन-सा स्थान चुना जाय, कौन-सा साधन चुना जाय। नटनागरजी आत्महत्याका कोई ऐसा मौलिक साधन तलाश कर रहे थे....कोई ऐसा तरीका जिसका अबतक किसीने प्रयोग न किया हो, जो अबतक किसीके दिमागमें आया न हो। जीतेजी नहीं तो नटनागरजी मरनेपर तो कुछ नाम कमा ही जाना चाहते थे। शोक समाचार सुनकर लोग कहें कि कोई आदमी था। अखबार-वाले फोटो और जीवन चरित्र छापेंगे। नटनागरजीकी अन्तिम इच्छा बलवती हो रही थी। आत्महत्याकर नटनागरजी अमर हो जायँगे, शहीद बन जायेंगे।

एकाएक नटनागरजीके दिमागमें आया कि इतनी बेशकीमती जिन्दगी बेमतलब क्यों दे दी जाय, इतना बहुमूल्य जीवन और देव-दुर्लभ मानव तन अकारण ही क्यों नष्ट कर दिया जाय। विचारने आगे

बढ़कर तर्कको पकड़ा और दोनों कुतर्क करते हुए दार्शनिक स्तरपर पहुँच गये। अब नटनागरजी सोच रहे थे, क्यों न किसीके लिए कुर्बान हो जायँ, किसीके लिए जान दे दी जाय, मगर किसके लिए? कोई प्रेमिका भी तो नहीं। नटनागरजीने कभी किसीसे प्रेम किया हो स्मरण नहीं आता। स्मृतिपर एक-एक करके सभी नारी आकृतियाँ घूम गयीं। सेठानी....उसका नटनागरजी नाम लेना नहीं चाहते थे, चक्रधर चौधरीकी पुत्री, उसकी सूरत देखना नहीं चाहते थे। फिर क्या हो? किसी अज्ञात प्रेमिकाके लिए जान देना बिलकुल बेमतलब, बेमानी होगा। कम-से-कम इतना तो हो कि मरनेपर कोई नटनागरजीकी मजारपर दो बूँद आँसू बहाये, नहीं, नहीं, भूलता हूँ, अनोखेलालकी लाशपर दो फूल फेंक दे।

नटनागरजीके मानसमें आत्मबलिदान और आत्म-समर्पणकी भावना घनीभूत होती जा रही थी। किसी देवीको प्राणोंकी भेंट, जीवनका दान करनेके लिए आकुल हो उठे। पर देवीका पता नहीं था। पहले देवी-की तलाश करनी होगी। नारी नटनागरजीकी सबसे बड़ी कमजोरी थी। इस स्थलपर कई बार वह धोखा खा चुके हैं, नीचा देख चुके हैं, इस-लिए जरा घबराते थे। मरनेके एक घण्टा पूर्व भी एक नारीमूर्तिकी जरूरत होगी, नटनागरजीको यह कल्पना तक नहीं थी, न जीवनमें नारीका इतना अधिक मूल्य ही आँका था।

नटनागरजीको मरनेके पूर्व एक प्रेमिका चाहिये। विकट समस्या थी। औरतका मामला था....वह भी प्रेमिका। बेचारे फूँक-फूँकर कदम रख रहे थे। सोचा किसी सहृदय मित्रसे सलाह ली जाय। पुरुष मित्रोंका उन्हें भरोसा नहीं था, सब कीचड़के दलदलमें ढकेलकर मजा लेनेवाले थे। महिलाओंमें किसीसे मैत्री नहीं थी। तभी याद आयी कुमारी भैरवीकी जो विश्वविद्यालयमें महिलाकक्षकी अध्यक्षा थी। चालीस पार थीं, इसलिए अधेड़ कुमारोंसे सहृदयतापूर्वक मिलती थीं। नटनागरजीको अपने बीमा-एजेण्ट जीवनमें प्रथम दर्शनमें ही कहीं प्रेमप्रदर्शन और

सफलता मिली थी तो भैरवीजीके यहाँ। पहली मुलाकातमें प्रस्ताव करते ही उन्होंने अपना बीमा करा लिया था। तभीसे नटनागरजी उनका आदर करते थे। भैरवीजीके लिए उनके हृदयमें मुलायम कोना सदाके लिए सुरक्षित हो गया था। आज अचानक सङ्कटके समय उनकी याद हो आयी।

नटनागरजी भैरवीजीसे मिलने चले। रविवारका दिन था। भैरवीजी अपने बँगलेके बाहर बरामदेमें बैठी मिल गयीं। गोदमें उनके गोले पड़े हुए थे। उँगलियोंकी सलाइयाँ ताने-बानेके जालमें उलझ रही थीं। नटनागरजीका प्रेमसे स्वागत किया। कुशल क्षेम पूछने, स्वास्थ्य समाचार प्राप्त करनेके बाद नटनागरजीने पूछा कहिये यह स्वेटर अपने लिए बुन रही हैं क्या?

'नहीं, बच्चे का है।'

'आपके बच्चेका....अरे रे....क्षमा करियेगा भूल हुई' कहकर नटनागरजीने अपने ओठ काट लिये।

'क्षमा याचना करनेकी जरूरत नहीं। बच्चोंके स्वेटर बुननेकी मेरी हॉबी है। बुन-बुनकर रखती जाती हूँ मरनेके पूर्व किसी शिशु-कल्याण संस्थाको दे जाऊँगी।'

'कैसी बात करती हैं भैरवीजी। मरनेकी नहीं अभी जीने की बात करिये।'

'जी तो रही हूँ नटनागरजीपर जीनेमें कोई आकर्षण नहीं रह गया है। शादी करनेका इरादा नहीं है....यह तो आप जानते ही हैं।'

'ठीक ऐसी ही स्थितिमें मेरी जिन्दगी भी गुजर रही है। अजीब साम्य है। अपनी नीरस जिन्दगीसे ऊबकर आत्महत्याका निश्चय कर मैं आपसे आखिरी मुलाकात करने आया था।'

'कैसी बात करते हैं नटनागरजी।' आत्महत्याके नामपर भैरवीजी चौंक पड़ीं।

'मेरी बात मानिये आत्महत्याका विचार बदल दीजिये, त्याग दीजिये। आत्महत्याकी कल्पना भयानक है। मैं इसके विचारमात्रसे सिहर उठती हूँ। आप आत्म-हत्याकी बात करेंगे तो मैं पागल हो जाऊँगी। मुझे वचन दीजिये कि आप आत्महत्या नहीं करेंगे।'

'भैरवीजी आपकी सहानुभूति पाकर मैं तो जी उठा। पर यह जीवन अपने किसी कामका नहीं। मैं इसे आपको भेंट करता हूँ। आपके किसी काम आ सका तो मैं अपना जीवन सफल और सार्थक समझूँगा।'

नटनागरजी भावावेशमें भैरवीजीके चरणोंमें लोट गये और उन्हें आँसुओंसे भिगोने लगे। भैरवीजी द्रवित हो उठीं। उन्होंने नटनागरजीको हाथ पकड़कर उठाया। नटनागरजीने भैरवीजीको गलेसे लगा लिया। भैरवीजीको कोई आपत्ति नहीं हुई।

दो भूली हुई नौकाएँ एक साथ किनारे लगीं। जीवन जङ्गलमें भटके हुए दो यात्री एक साथ ठीक राह पा गये। बीमा एजेण्ट नटनागरजीको आत्महत्या करनेसे रोककर भैरवीजीने अपना जीवन बीमा करा लिया। यही वह चाहती भी थीं। नटनागरजीके नाना रूपोंमें बीमा-एजेण्टकी भूमिका उनके जीवनकी सबसे सफल भूमिका सिद्ध हुई। शोभा इंश्योरेंसके एजेण्टके रूपमें उन्होंने अपना जीवन प्रारम्भ किया। आज भैरवीजीका जीवन बीमा कर वह अवकाश ग्रहण करना चाहते हैं। आज उनके पास मोटर है, बँगला है। अवकाश प्राप्त सिनेमा स्टारसे मिलती-जुलती पत्नी है, बङ्कमें बैलेंस है, समाजमें मान है। और क्या चाहिये? लाला अनोखेलाल नटनागरजीको एक घटनापूर्ण जीवनके शेष दिन आनन्दसे बिताने दीजिये। इनके सुखमय विवाहित जीवनके लिए आप अपनी शुभकामना अवश्य प्रकट कर सकते हैं।

जैसे अनोखेलाल नटनागरके दिन लौटे, भगवान् करे सबके लौटें।

जरा रुकिये—

निबंध आप पढ़ चुके ? कैसे लगे ? आपकी मूल्यवान सम्मति जाननेको लेखक उत्सुक है। निबंधकी शैली आपको पसंद आयी तो लेखककी निम्न लिखित कृतियाँ भी आप पढ़ना चाहेंगे—

(१) दो काली-काली आँखें
कहानी संग्रह १९४६

(२) मखमली जूती
कहानी संग्रह १९५४

(३) राम झरोखा
कविता संग्रह १९५५

(४) चिर कुमारी सभा
कहानी संग्रह (प्रेस में)

प्राप्ति स्थान—

चौधरी एण्ड सन्स

बनारस—१